RNI No. : UPHIN-2009/29369

डाक पंजीकरण : KANPUR HO/002/2025-27
प्रधान डाकघर कानपुर-डाक प्रेषण दिनांक 29/30

वार्षिक सदस्यता शुल्क 100/-

द्रविड़ भारत

www.dbindia.org.in

सामाजिक परिवर्तन का मासिक पत्र

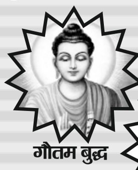
गौतम बुद्ध

बाबा साहेब डा० अम्बेडकर

मई-2026 | वर्ष - 18 | अंक : 04 | मूल्य : 5/-

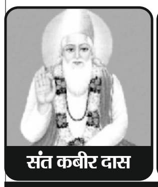
संत कबीर दास

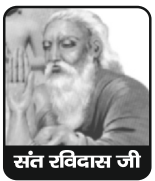
संत रविदास जी

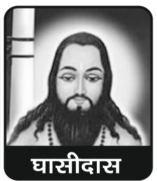
घासीदास

बिरसामुण्डा

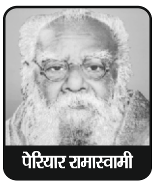
पेरियार रामास्वामी

छत्रपति शाहूजी महाराज

सन्त गाडगे

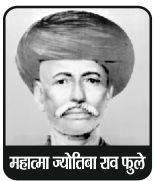
महात्मा ज्योतिबा राव फुले

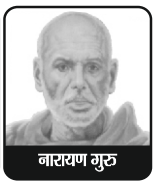
नारायण गुरु

सावित्री बाई फुले

कांशीराम

Youtube पर Dravid Bharat द्रविड़ भारत Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

सम्पादकीय

RNI No. : UPHIN-2009/29369

संपादक : उमेश्वरी देवी, मो.: 9005204074
संरक्षक मण्डल : मा. रामदीन अहिरवार (महोबा),
मा. राम अवतार चौधरी (जलकल विभाग),
मा. छविलाल वर्मा (चरखारी), मा. हरिनाथ राम (दिल्ली), मनीष कुमार मो. 9415053621
राज्य ब्यूरो प्रमुख उत्तर प्रदेश :
सुनील कुमार, ढेलवा, गाजीपुर (उ.प्र.),
मो.: 9935363730, 9170836363
योगेन्द्र कुमार (ब्यूरो चीफ चित्रकूट मण्डल)
मो.: 8299162841
हमीरपुर ब्यूरो प्रमुख -
रघुवर प्रसाद, मो.: 9793739030
क्षेत्रीय सम्पादकीय कार्यालय :
40/69, डी-5, श्यामलाल का हाता, परेड,
कानपुर (उ.प्र.), मो. : 8756157631
ब्यूरो प्रमुख लखनऊ मण्डल :
राजकुमार, उन्नाव
मो.: 9889273743, 9392660070
हरियाणा राज्य :
डा. रमेश रंगा, ग्राम-सराय, औरंगाबाद, पो.-बहादुरगढ़,जिला-झज्जर (हरियाणा),09416347052
कानूनी सलाहकार : एड. रामप्रकाश अहिरवार, एड. यू.के. यादव, मोती लाल वर्मा, एड. विजय बहादुर सिंह राजपूत, एड. रमाकान्त धुरिया, रामऔतार वर्मा, एड. सुशील कुमार, कानपुर
मध्य प्रदेश राज्य : पुष्पेन्द्र कुमार
कार्यालय : ग्रा. व पो.-रामटौरिया, जिला-छतरपुर
छत्तीसगढ़ राज्य : ब्यूरो प्रमुख
रमा गजभिये, मो.: 7828273934
दिल्ली प्रदेश : C/o अनिल कुमार कनौजिया C-260, हर्ष विहार, हरिनगर एक्सटेंशन पार्ट-III, बदरपुर, नई दिल्ली-44, मो. : 09540552317
राजस्थान राज्य : रघुनाथ बौद्ध, श्याम रघु फुट वियर, दुकान नं.-1, गणेश मार्केट, पुलिस चौकी के सामने, अलवर, जिला-अलवर-301001,
मो. : 09887512360, 0144-3201516
बाबूलाल बौद्ध, अलवर, मो.-08058198233
संपादकीय/विज्ञापन प्रसार/पंजीकृत कार्यालय :
ग्रा व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला-महोबा (उ.प्र.)
मो. : 9005204074, 8756157631
E-mail : dravinbharat1@gmail.com
प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वामी
उमेश्वरी देवी द्वारा ग्रा. व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला महोबा से प्रकाशित व श्रेय ऑफसेट प्रा. लि., 109/406, नेहरू नगर, कानपुर, 84/1, बी, फजलगंज, कानपुर से मुद्रित

प्रकाशित पत्रिका में प्रकाशित लेख, सामग्री, में संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। इसमें किसी भी प्रकार का दावा या विचार मान्य नहीं होगा। लेख के विवादित होने पर लेखक ही उत्तरदायी होगा समस्त विवादों का निपटारा महोबा न्यायालय में होगा पत्रिका का संपादन एवं संचालन पूर्णतयः अवैतनिक एवं अव्यवसायिक है।

मिशन को बढ़ाने के लिए सहयोग करें -
भारतीय स्टेट बैंक
पी.पी.एन. मार्केट, कानपुर
खाता सं.-33496621020
IFSC CODE-SBIN0001784

इन्सानियत की जिन्दगी जीने के लिए बुद्ध धम्म की आवश्यकता-कांशीराम

(नागपुर)

''हजारों वर्षो से इस देश का दलित-शोषित समाज ब्राह्मणवादी समाज व्यवस्था का शिकार है। इस पीड़ित समाज को समानता का दर्जा देने के लिए, स्वाभिमान के साथ जीने के लिए, बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने बुद्ध धम्म का रास्ता 14 अक्टूबर 1956 में अपनाया। उनके महापरिनिर्वाण के पश्चात बाबा साहब द्वारा प्रारम्भ की गई धम्म-क्रांति को उनके सहयोगी सही दिशा में बढ़ा नहीं सके और आज भी उनका वह सपना अधूरा ही रह गया है। हम समझते हैं कि इस दिशा में कार्य करना हमारा कर्तव्य बन जाता है। इसीलिए हमारे पास उपलब्ध सभी साधनों का इस्तेमाल कर हमें विशाल संघ का निर्माण करना है। इस संघ-शक्ति के आधार पर हम जो चाहेंगे वह प्राप्त कर पायेंगे। इसी संघ-शक्ति के आधार पर हम दलित-शोषित समाज को समता और स्वाभिमान के साथ जीने का माहौल निर्माण कर पाएंगे।''

उपरोक्त विचार बुद्धिस्ट रिसर्च सेन्टर के संस्थापक मा. कांशीराम जी ने बी.आर.सी. द्वारा 1 जनवरी 1984 को 'अम्बाझरी गार्डन सांस्कृतिक भवन' के मैदान में उपस्थित बौद्ध धर्मीय जनता को सम्बोधित करते हुए प्रकट किये।

धम्म क्रान्ति के सम्बन्ध में आगे बोलते हुए मा. कांशीराम जी ने कहा कि सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से पिछड़े जनसमुदाय की प्रगति के लिए बाबा साहब ने बुद्ध धम्म की दीक्षा दी। परन्तु धर्म परिवर्तन के 53 दिन के भीतर ही उनका परिनिर्वाण हुआ और उनके द्वारा शुरू की गई धम्म क्रान्ति जिस तरह से आगे बढ़नी चाहिए थी बढ़ नहीं सकी। उनकी इस धम्म क्रान्ति को आगे बढ़ाने की जिम्मेदारी उनके अनुयाइयों की थी। परन्तु निजी स्वार्थ के कारण वे भी इस धम्म क्रान्ति को आगे बढ़ा नहीं सके।

आगे आपने कहा- 1975 में इसी स्थान पर ''बौद्ध शिखर परिषद' का आयोजन किया गया था, जो 1956 की धम्म क्रान्ति के 18-19 वर्ष बाद का प्रयास था। इस परिषद में देश के कोने-कोने से बौद्ध धर्मीय नेतागण आये थे। विशाल स्तर पर आयोजित इस परिषद ने बौद्ध धर्मीय जनता में आशा की एक नई ज्योति प्रज्वलित की थी। परन्तु आज 8 वर्ष के पश्चात भी धम्म प्रसार की दृष्टि से कोई प्रगति नजर नहीं आ रही है। इसीलिए फिर 8 वर्ष के पश्चात हम यहाँ इकट्ठे हुये हैं।

धम्म दीक्षा सम्मेलन की वर्षगांठ के सम्बन्ध में बोलते हए कांशीराम जी ने कहा कि जब हम धम्म दीक्षा की 25 वीं वर्षगांठ मना रहे थे, मैंने समाचार पत्रों में पढ़ा जिसमें दलितों द्वारा मुस्लिम धर्म में धर्म परिवर्तन की खबरें छपती थीं। इतना ही नहीं बल्कि मैंने यहाँ तक सुना कि नागपुर के करीब ही एक देहात में एक बौद्ध धर्मीय परिवार मुस्लिम धर्म में प्रवेश करने वाला था, और विशेष यह कि यह धर्म परिवर्तन का कार्यक्रम बाबा साहब के महापरिर्नाण दिवस के अवसर पर नियोजित था और विशेष आश्चर्य देने वाली बात यह थी कि इसे प्रोत्साहित करने में हमारे नेता ही आगे थे। इस बात का मुझे काफी दुख हुआ। मैं यह महसूस करने लगा कि इस दिशा में हमें कुछ करना होगा। इसी दृष्टिकोण को सामने रख हमने 2 वर्ष पूर्व दिल्ली में बुद्धिस्ट रिसर्च सेन्टर की स्थापना की।

वर्तमान धार्मिक संस्थाओं की ओर इशारा करते हुए आपने कहा कि अगर वर्तमान धार्मिक संस्थाओं ने यह कार्य किया होता तो हमें नई संस्था बनाने की आवश्यकता महसूस नहीं हुई होती। परन्तु मजबूर होकर हमें बी.आर.सी.का निर्माण करना पड़ा। मुझे मालूम है, नई संस्था का निर्माण यानि संघ शक्ति का विघटन। परन्तु बाबा साहब की धम्म क्रान्ति को सही दिशा और गति नहीं मिलने से हमें नई संस्था के माध्यम से इस कार्य को अपने हाथ में लेना पड़ा।

आगे अपनी भूमिका अधिक स्पष्ट करते हुए मा. कांशीराम जी ने कहा-बामसेफ, डी-एस4, राजनीति आदि कई फ्रन्ट पर मेरे कार्यरत रहने पर कई लोगों ने यह शंका प्रकट की कि मैं धार्मिक आन्दोलन का विरोधी हूँ। परन्तु मेरी यह धारणा थी कि जब हमारे कुछ नेतागण इस कार्य में जुटे हुए हैं तब मुझे इस कार्य में पढ़ने की जरूरत नहीं होगी। परन्तु जब देखा कि यह कार्य जिस तरह चलना चाहिए उस तरह चल नहीं रहा और इसीलिए फिर मुझे इधर भी ध्यान देने के लिए मजबूर होना पड़ा।

जब मैं कुछ करने के लिए आगे बढ़ता हूँ तब हमारे अपने लोग ही किस तरह रास्ते में रोड़े अटकाते हैं, यह कहते हुए आपने कहा कि अगर वे स्वयम् कुछ नहीं कर सकते, तब कम से कम हमें तो समाज के लिए कुछ करने दें और हमारे रास्ते में रोड़े न अटकायें।

अन्त में आपने कहा कि अगर आज भी ये नेता और संगठन धम्म क्रान्ति को आगे बढ़ाने में अपनी जिम्मेदारी समझते हैं, और आगे बढ़ते हैं तो हम उन्हें हर तरह का सहयोग देने के लिए तैयार हैं, और अगर वे ऐसा करने से हिचकिचाते हैं तो हमसे जितना बन पायेगा, हम करेंगे। लेकिन हम जो करेंगे उसकी जानकारी हर माह जनता को देते रहेंगे।

नागपुर की जनता को धन्यवाद देते हुए आपने कहा कि इन तीन दिन के परिसंवाद के दौरान नागपुरवासी बौद्ध धर्मीय जनता ने जो सहयोग दिया और बाहर से आये अतिथिगण के प्रति जो आत्मीयता दर्शाई इसके लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ और आगे भी यह सहयोग और प्रेम हमें मिलता रहेगा ऐसी अपेक्षा करता हूँ।

जनसभा को डा. भदन्त आनन्द कौसल्यायन (नागपुर), स्नेह कुमार चकमा (अगरतल्ला, त्रिपुरा), आर. डी. सुमन (नई दिल्ली), अनागरिका संघमित्रा (नासिक), भन्ते धम्म दीप (उत्तर प्रदेश), एड. पी.एस. धनवे (नांदेड़), के अलावा प्रो. अरुण चौधरी (दिल्ली), भन्ते शीलभद्र (इटावा), भन्ते बुद्ध शरण (फिरोजाबाद), प्रा. परमे राव (हैदराबाद) आदि ने सम्बोधित किया। भदन्त आनन्द का कौसल्यायन ने उपस्थित बौद्ध समुदाय को पंचशील और त्रिशरण ग्रहण करवाया। कार्यक्रम का संचालन पंडित राव सोनोने ने किया तथा आभार प्रदर्शन एस.के.पाटिल ने किया।

(बहुजन संगठक, वर्ष 4, अंक 45, 13 फरवरी, 1984)

lkHkkj %
cgtu lxBd e ikdkf'kr
ek- dk'khjke lkgc d ,frgkfld Hkk"k.k
i`t l[;k 259 l 261 rd
,- vkj- vdyk

सामाजिक परम्पराएं

अपने सामाजिक जीवन में चमार जिन सामाजिक परम्पराओं का निर्वाह करता है, वे अधिकतर तो हिन्दू रीति–नीति पर आधारित हैं और हिन्दू क्या, तथाकथित आर्य, जिनके वारिस हिन्दू अपने आपको मानते हैं, उन्होंने यहां के मूलनिवासियों से ही ग्रहण किया है और उन पर धर्म विशेष का ठप्पा लगाकर, पुरोहिताई से जोड़ कर तथा शास्त्र–सम्मत बनाकर उन पर एकाधिकार–सा स्थापित कर लिया। जन्म, शादी–विवाह, मृत्यु के अवसर पर ये रस्मों–रिवाज तथा रहन–सहन, खान–पान के तौर–तरीके सदियों से चले आ रहे हैं इनमें समय के साथ–साथ जो बदलाव हुआ है, वह बहुत ही कम है। हाँ, अलग–अलग क्षेत्रों तथा प्रदेशों में भिन्नता जरूर पाई जाती है।

यह बहुत ही महत्वपूर्ण बात है कि चमार समाज स्वावलम्बी था और हर तरह से परिपूर्ण था। उसे किसी भी काम में दूसरों की जरूरत नहीं पड़ती थी। चाहे पंडित, नाई, बिचोलिया हो या भाट (चारण), भगत (सयाने), आया (दाई) या किसी भी अवसर पर गाने वाले (गवैये) हों, सब इनके अपने थे। यही नहीं, बैंड बजाने वाले और अन्य कलाकार कहीं बाहर से बुलाने की जरूर नहीं पड़ती थी, वे इन्हीं में से होते थे। इनके बीच में, इनके बुलावे पर चमारू होली, ढोला व सांग करने वाले, जो दूसरों से ज्ञान और मनोरंजन की दृष्टि से किसी भी तरह कम नहीं थे, जिन्हें देखने–सुनने के लिए दूसरे लोग भी बड़ी संख्या में आते थे और इन्हीं के साथ बैठकर उसका रसास्वादन करते थे तथा खुले दिल से सराहना भी करते थे।

बाल काटने और दाढ़ी बनाने का काम जो व्यक्ति करता था, दूसरों की तरह उसे नाई कहते थे और इसके साथ–साथ शादी–ब्याह में खाने तथा बारात आदि में चलने का न्यौता देने काम भी वही करता था। शादी–ब्याह की तिथि सुझाने, फेरों का मुहूर्त निकालने तथा फेरे आदि कराने वाला इनका अपना पंडित होता था, जिसे दोनों तरफ से इसके बदले में नकद राशि मिलती थी, जिसे नेग कहा जाता था, जन्म, विवाह तथा मृत्यु के अवसर पर जो दूसरे कार्य होते थे, वह भी यही सम्पन्न कराता था।

चमार समाज में जो सबसे अच्छी प्रथा चली आ रही थी, जिसके चलते किसी साहूकार तथा बनिये के सामने रुपये मांगने के लिए नहीं जाना पड़ता था, वह न्योता प्रथा था। लड़का या लड़की की शादी में जिन्हें निमंत्रण (न्योता) दिया जाता था, वे नकद रुपयों या अन्य चीजों के रूप में न्योता डालते थे, जिसका बाकायदा बही में लिखित में हिसाब रहता था और हर न्योता गया व्यक्ति अपने यहाँ प्राप्त हुए का दुगुना न्यौते के रूप में देता था। इस प्रकार शादी का बहुत बड़ा कार्य बड़ी सुविधा के साथ पूर्ण हो जाता था।

दूसरे दहेज मांगने का कोई रिवाज नहीं था भूल से भी ऐसा कहने वाले को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता था। लड़का या लड़की के मामा भी शादी के अवसर पर भात के रूप में नकद तथा कपड़े आदि देकर हाथ बंटाते थे। शादी के कार्य में मध्यस्थ की भूमिका अदा करने वाले को विचौलिया कहा जाता था, जिसे रोकना, सगाई, शादी तथा गौने के अवसर पर दोनों तरफ से नकद व कपड़े के रूप में 'बिचोलगी' दी जाती थी। चमार समाज में 'पंच परमेश्वर' की भी प्रथा थी सगाई, विवाह तथा बारात विदा के समय उसका सम्मान किया जाता था। विधवा–विवाह के चलन से विधवा जैसी कोई समस्या नहीं थी। यदि किसी की मृत्यु जवान अवस्था में हो जाती थी, तो उसकी पत्नी को उसके भाई या किसी नजदीकी रिश्तेदार के साथ जोड़ दिया जाता था और वह अपनी भाभी को पत्नी के रूप में पूरा सम्मान देकर स्वीकार करते हुए सभी पारिवारिक जिम्मेदारियों का निर्वाह करता था।

बहुत पुराने समय में चमार लड़के–लड़कियों का विवाह बड़ा (वयस्क) होने पर ही करते थे, लेकिन आर्यों से हारने के बाद उनके हमेशा गुलाम बनाये रखने के लिए नापाक इरादे को भांपते हुए बाल्य–अवस्था में ही करने लगे, तब 'गौना' की प्रथा अस्तित्व में आई और यह गौना शादी के बाद दस–पन्द्रह साल के अन्तर से किया जाने लगा, मतलब पुनः बालिक होने पर ही यह संस्कार सम्पन्न होने लगा। यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि सरकारी नौकरियों में आने से चमार जाति के लोगों का जीवन स्तर दूसरों के मुकाबले का हो गया है, खान–पान और रहन–सहन में कही अन्तर दिखाई नहीं देता, लेकिन दहेज की प्रथा एक बीमारी बनकर सामने आ रही है और शादी–ब्याह में तड़क–भड़क दिखावा और फिजूलखर्ची भी बहुत बढ़ गई है, जिस पर रोक लगाने की सख्त जरूरत है। सामाजिक संगठनों को दिशा में और जोर–शोर से पहल करनी चाहिए।

वैसे तो दूसरों की तरह ही चमार भी जादू–टोना, भूत–प्रेत तथा ऊपरी हवाओं में विश्वास करते हैं और गर्भवती स्त्री को उससे बचाने के लिए सयाने (भगत) द्वारा तैयार किया गया नीला या काला धागा या ताबीज गले में पहनाया जाता है। गर्भ के दौरान सूर्यग्रहण पड़ता है, तो उसमें गर्भवती औरत को बाहर निकलने की मनाही है। बच्चा होने से पहले या उसी दौरान पैसा या गहना उठाकर रख दिया जाता है, जिससे बच्चे का जन्म सही–सलामत हो जाए अथवा कुछ बोल दिया जाता है अर्थात् कुछ भेंट–पूजा का वायदा कर लिया जाता है। बच्चा पैदा होने के बाद बच्चे की नाल काटने तथा बच्चा–जच्चा को नहलाने के बाद गुड–घी तथा मेवों मसालों में बनाई गई पात खाने को दी जाती है। लड़के की छठी करने का भी रिवाज रहा है, जिसमें रिश्तेदारों तथा बिरादरी वालों को भोजन देने की प्रथा है। इसके बाद तरूणाई में और कोई रिवाज नहीं है, लेकिन अब लोगों में बच्चे का जन्म–दिन मनाने की प्रथा चल पड़ी है।

जहाँ तक मृत्यु के उपरान्त के रिवाजों की बात है आमतौर पर शव को जलाया जाता है। शिवनारायण पंथ और कबीरपंथ में शव को गाड़ने की प्रथा है। मृत्यु के तीसरे दिन अस्थियों को एकत्र कर गंगा में प्रवाहित करने के लिए ले जाया जाता है। यदि उसी दिन ले जाने में किसी प्रकार की अड़चन या असुविधा हो, तो अस्थियां श्मशान में ही किसी घड़े में भरकर किसी सुरक्षित स्थान पर गाड़ दिया जाता है या किसी पेड़ पर लटका दिया जाता है और तेरहवीं से पहले किसी दिन गंगा में प्रवाहित किया जाता है। फिर तेरहवीं, जो मृत्यु के सात से तेरह दिन के बीच कभी भी की जा सकती है, जिसमें सामर्थ्य के अनुसार बिरादरी वालो तथा संबंधियों को भोजन खिलाया जाता है। मृत्यु के तीसरे दिन अर्थात् तीजे वाले दिन मरने वाले की आत्मा आती है, ऐसा विश्वास है और उसे मृत्यु के बाद उतारने के स्थान पर खाने के समान रख दिए जाते हैं और राख छानकर बिखेरी जाती है, ताकि यह पता लग सके कि वह किस रूप में आई है, ऐसा अंधिविश्वास अभी तक चला आ रहा है। यह पुनर्जन्म के विश्वास का द्योतक है।

इसमें कोई दो राय नहीं कि चमार प्राचीनकाल से ही संगीत का प्रेमी रहा है इसने ढोला, आल्हा तथा सांग का भी आनन्द लिया। समाज के लोग हारमोनियम, ढोल, मृदंग तथा खंजरी आदि की मधुर तान के साथ गुरु रविदास जी व कबीरदास जी के पद, भजन, लावनी और गीतों से अपना भरपूर मनोरंजन करते हैं। उनकी वाणियाँ सत्संग के रूप में इकट्ठे होकर मंदिरों में गाई जाती हैं। लौणा चमारी मंत्र सिद्धि की देवी मानी जाती है और उसके नाम से झाड़–फूंक भी की जाती है टोना–टोटका, झाड़–फूंक में विश्वास अभी भी कुछ चमार करते हैं। ये आज ही नहीं, पहले से ही नृत्य कला में भी माहिर हैं। आज डॉ. अम्बेडकर और बुद्ध वचनों के गीतों की ओर भी रूझान बढ़ रहा है। शादी–विवाह में पंडित–पुरोहितों के स्थान पर बौद्ध भिक्षुओं को भी बुलाया जाने लगा है, जिनकी संख्या बहुत कम है और अधिकतर चमार पंडित बुलाकर हिन्दु–पद्धति से ही बच्चों की शादी करते हैं।

चमार जाति के लोगों के बारे में जी. डब्ल्यू ब्रिग्स द्वारा वर्णित परम्पराओं का विस्तृत विवरण निम्नवत है –

जन्म

इसमें कोई दो राय नहीं कि हर दृष्टि से चमार स्वतन्त्र चेता है वह ब्राह्मणवादी व्यवस्था का कहीं भी अन्धानुकरण नहीं करता और 16 संस्कारों से उसे कोई सरोकार नहीं वह जो जरूरी समझता है, उसी को व्यवहार में लाता है। बच्चे के जन्म होने की स्थिति में वह अपने समाज की दाइयों का ही सहयोग लेता है, जो अनुभव में किसी से कम नहीं होती, बल्कि दूसरी बिरादरी के लोग भी उनकी सेवा लेते हैं और उसकी सलाह के अनुसार सारे काम होते हैं। इसके पहले गर्भवती स्त्री को जो पीड़ा होती है, उस समय उस स्त्री को घी तथा उड़द की दाला पानी पकाकर पिलाया जाता है, अथवा एक तांबे का सिक्का पानी में अच्छी तरह धोकर, वह पानी उस महिला को पीने के लिए दिया जाता है। इसके साथ–साथ एक तांबे का एक सिक्का मुँह में रखने के बाद उसे अपने आराध्य देवी–देवता का नाम लेकर एक निश्चित स्थान पर रख दिया जाता है और प्रसूता के कमरें में स्वास्तिक का चिन्ह अंकित करके उस कमरे के बाहर दरवाजे पर बेल और नागफनी की लकड़ियाँ टांग दी जाती हैं, ताकि बुरी आत्माएँ उसमें प्रवेश नहीं कर सकें।

इसका वैज्ञानिक या अन्य रूप से कोई अर्थ है कि नहीं, परन्तु उस स्त्री के कमरे के आसपास आग जलाने का प्रचलन है और उसमें अजवाइन या अन्य चीजें बीच–बीच में झोंकी जाती हैं और इस आग में पुराना जूता डालने का रिवाज भी देखने में आया है। शायद यह अपशकुन को दूर करने के उद्देश्य से किया जाता है। यह भी देखने में आया है कि बच्चा पैदा होने समय यदि जच्चा को अधिक दर्द होता है, तब जच्चे के पैदा होने में देर लग रही होती है, तो ऐसी स्थिति में परिवार के सदस्य नीचे जमीन पर विराजमान हो जाते हैं और प्रसवा को भी पैरो के बल जमीन पर ही बैठा दिया जाता है और उसे परिवार या निकट संबंधी दो औरतें दोनों तरफ से उसे संभाले रहती हैं, जिससे बच्चा पैदा होने में सुविधा रहती है, लेकिन आजकल अधिकांशतः जच्चा–बच्चा केन्द्रों में ही प्रसव के लिए औरतों को ले जाया जाता है, क्योंकि वहाँ पर स्थिति को सम्भालने की सुविधाएँ उपलब्ध होती हैं।

बच्चे के पैदा होने के बाद पास पड़ोस की औरतें गीत गाती हैं, उस अवसर पर गाए जाने वाले गीत को 'सौहड़' का नाम दिया जाता है। इस गीत में मुख्यतः शीतला माता की स्तुति ही होती है। बच्चा पैदा होने के छठे दिन तक लगभग रोज ही गीत गाये जाते हैं और बुरी आत्माओं के प्रभाव से बच्चे को बचाने केलिए तवा बजाने का काम होता है। यदि लड़की पैदा होती है, तो गीत गाने तथा तवा बजाने में उतनी उत्सुकता नहीं रहती। हालांकि इस तरह की प्रथा लगभग सारे देश में है, परन्तु कहीं–कहीं बच्चे की सलामती के तरीके लड़का–लड़की दोनों की स्थिति में समान रूप से इस्तेमाल किये जाते हैं। किंचित जगहों पर ऐसा भी होता है कि लड़का पैदा होने की सूचना की दृष्टि से घर को गोबर से लीप दिया जाता है। यह तो स्वाभाविक ही है कि लड़का पैदा होने की स्थिति में जच्चा की हिफाजत और बेहतर तरीके से की जाती है। नीम या सिरस की टहनी, एक लोहे का छल्ला दरवाजे पर लटकाया जाता है और आम की पत्तियों का लटकाना और भी अच्छा माना जाता है। ऐसी मान्यता है कि कुछ दैवी शक्तियाँ बच्चे की रक्षा करती हैं।

चमार दीवारों पर बैठ जाते हैं, मकान की दहलीज पर आग जलाई जाती है, जिसे दिन–रात प्रज्वलित रखा जाता है। प्रसवा को व्यवस्थित करने के लिए सिर के बालों को संवारा जाता है, मुँह साफ करते हैं, उसके बाद बच्चे की नाल को काटा जाता है और नवजात शिशु को सूखी मिट्टी या गेहूँ के आटे से रगड़ कर हल्के गरम पानी से स्नान कराया जाता है। इस हालात में बच्चे को पंखे की हवा नहीं लगने दी जाती। फिर बच्चे को दाई को सौंपकर जच्चा को नहलाया जाता है और कहीं–कहीं आंशिक स्नान अर्थात् हाथ–मुँह धोने तक ही सीमित रखा गया है। नाल को इतने सुरक्षित स्थान पर गाड़ा जाता है कि उन तक किसी अन्य स्त्री भूत–प्रेत या ओझा–सयाने नहीं पहुँच सकें। चमार जाति के लोगों में ऐसा विश्वास है कि यदि कोई औरत इस नाल को खा ले, तो बच्चे का जीवन खतरे में पड़ जाता है, और यही नाल किसी ओझा या सयाने के हाथ पड़ जाए, तो वे उसे अपने मंत्रों के वश में कर लेते हैं तथा किसी वजह से नाल बुरी आत्मा को प्राप्त हो जाए तो बच्चा उसी के नियंत्रण में रहता है।

बांझपन और कुप्रथाएं चमार लोगों में बांझ औरत को बहुत दुर्भाग्यशाली माना जाता है, इसलिए इस अपमानजनक स्थिति से सुरक्षा पाने के लिए बांझ औरत

तरह–तरह के प्रयत्न करती है। वह तीर्थ–स्थानों, धर्म–स्थलों, औझा–फकीरों, साधु–सन्तों के पास जाती है, वह मस्जिदों में जाती है तथा पीर–फकीरों के मजारों पर भी मत्था टेकती है। जगह–जगह चढ़ावा चढ़ाती है, दान करती है, अनाज व चादर दान करती है। वैद्य–डाक्टरों से इलाज कराती है, गंडा, ताबीज धारण करती है। उसे बांझपन दूर करने के लिए जो भी उपाय बताया जाता है, उसे हर तरह से पूरा करती है, चाहे घर चलाने का या नवजात बच्चे की नाल खाने जैसा घृणित काम भी क्यों न हो, वह बिलकुल नहीं हिचकती।

नाल खाने के पीछे यह भावना काम करती है कि बच्चा पैदा करने वाली औरत बांझ की स्थिति में आ जाएगी और बच्चे पैदा करने के गुण उस औरत में आ जाएंगे, जिसने बच्चे की नाल खाई है। कुछ औरतें बच्चे को कोसती हैं, ऐसा माना जाता है कि शाप देने पर कोसने से उस बच्चे की मृत्यु हो जाएगी और उसके बाद वह बांझ की कोख में आ जाएगा अर्थात् जन्म ले लेगा। ओझा इस बांझपन को दूर करने के लिए तरह–तरह के कारनामें करता है, भेंट चढ़वाता है, पानी पढ़कर पिलाता है, तरह–तरह की झाड़–फूंक करता है और उसके बदले में दक्षिणा भी लेता है। इसलिए बांझ औरत, बुरी आत्माएँ, ओझा, सयाने तथा जादूगरनी आदि के प्रकोप से बच्चे की रक्षा के मकसद से बच्चे की नाल के प्रति विशेष सावधानी बरती जाती है।

जन्म पर इनाम

बच्चे के पैदा होने की घोषणा अधिकतर मामलों में दाई या नाइन की करती है, दोनों की अनुपस्थिति में कोई रिश्तेदार औरत भी इस काम को अंजाम देती है। गाँव के मुखिया, सरपंच एवं दूसरे रिश्तेदारों को भी यह सूचना भिजवाई जाती है तथा शीतला माता के पूजा स्थान पर भी स्वास्तिक चिह्न काढ़ा (बनाया) जाता है। ऐसी एक अवधि निर्धारित होती है, जिसके दौरान जच्चा के कमरे में हर कोई प्रवेश नहीं करता और दाई तथा सपरिवार की उम्रदराज औरत के सिवाय किसी और को वहाँ जाने की इजाजत नहीं होती। जच्चा के अशुद्ध माने जाने के छठे से चौदहवें दिन तक ये औरतें ही उसकी देखभाल में रहती हैं। दाई की नाल काटने के बदले इनाम स्वरूप नकद राशि दी जाती है और अनाज भी दिया जाता है। इसके अलावा बच्चे के पिता से भी अलग से मेहनताना मिलता है। मेहनताना समय के हिसाब से बढ़ता रहता है। आज कल शहरों में तो दाई की सेवाएं और महंगी हैं और विशेषकर लड़के के जन्म होने के दौरान की स्थिति में लोग खुशी–खुशी देते भी हैं।

चमारों में दूसरे देवी–देवताओं से भी पित्तरों का महत्वपूर्ण स्थान है, इसलिए जच्चे को कुछ खिलाने से पहले पित्तरों को गुड़ अर्पित किया जाता है। वैसे तो जच्चा को प्रसव के दो दिन बाद तक कुछ भी खाने को नहीं दिया जाता, परन्तु जब बच्चा और जच्चा को नहला दिया जाता है, उसके बाद उसे गुड–घी और मेवा–मसालों से मिश्रित एक पेय जिसे 'पात' कहा जाता है, उसे भोजन के रूप में दिया जाता है। यदि परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी है तो 'पात' नामक यह भोजन जच्चा को दिन में कई–कई बार पिलाया जाता है। बीच–बीच में दूध भी दिया जाता है और छठे दिन के बाद सामान्य भोजन की शुरूआत हो जाती है। चार–पाँच दिनों तक बच्चे को कोई वस्त्र नहीं पहनाया जाता। फिर किसी रिश्तेदार या दूसरे के घर से मांगे गए कपड़े पहनाये जाते हैं। छः दिनों तक जच्चा–बच्चा की खासतौर से सुरक्षा का ध्यान रखा जाता है, ताकि कोई बुरी हवा उन्हें नुकसान न पहुँचा सके।

छठी की रस्म

फिर छठी से पहले वाली रात को परिवार के बड़े छोटे लोग बैठते और बच्चे के लक्षणों पर विचार करते हैं। इसके साथ–साथ चेचक, खसरा आदि खतरनाक बीमारियों से रक्षा के उपायों पर भी विचार–विमर्श करते हैं। फिर अगले दिन छठी की रस्म की जाती है। उस रात प्रसवा के कमरे में दीपक बराबर जलता रहता है और दरवाजे के दोनों ओर दीवार पर गोबर का चौकोर वर्ग बनाया जाता है। इसमें सातबुहारी की सीकें गाड़ी जाती हैं। बच्चे को तेल लगाया जाता है और उसकी आँखो में काजल लगाकर षष्ठी देवी के समक्ष उपस्थिति किया जाता है। ऐसी मान्यता है कि यह देवी जीवन भर उसकी रक्षा करते है।

छठी पूजा के बाद उसे उत्सव के रूप में मनाया जाता है, जिसमें परिवार तथा निकट संबंधियों को सामूहिक रूप से भोज दिया जाता है, मामा–नाना पक्ष की ओर से भी सहभागिता की जाती है अर्थात वे भी इस कार्य में भात जैसा आर्थिक सहयोग करते हैं। अकसर जन्म के बारहवें दिन 'काली देवी' को भेंट चढ़ाने का रिवाज हैं और उसके बाद काली के नाम की ज्योति जलाई जाती है। कहीं–कहीं इस दौरान भी दावत करने का रिवाज है।

नामकरण

वैसे तो बच्चे के पैदा होने के छः दिन बाद अर्थात छठी को ही नामकरण कर दिया जाता है, लेकिन कभी–कभी छः महीने बाद भी बच्चे का नाम रखा जाता है और नाम में अकसर पैदा होने के दिन या त्योहार अथवा संवत की तिथि को आधार बनाया जाता है, जैसे मंगल के दिन पैदा होने वाले बच्चे के नाम–मंगली, मंगलू, मंगलदास, बुद्धवार के दिन पैदा होने वाले बच्चे को बुद्ध, बुद्धों, बुधवा तथा शुक्रवार (जुमे) के दिन जन्म लेने वाले बच्चे का जुम्मा नाम रख दिया जाता है। इसी प्रकार सप्तमी (साते) सत्तो तथा चतुर्थी (चौथ) के तिथि को यदि बच्चे का जन्म हुआ तो चौथी व चौथू नाम से दिया जाता है।

आमतौर पर बच्चे का नाम माता–पिता की इच्छा के अनुसार रखा जाता है। प्रायः दो नाम भी देखने को मिले हैं, उनमें एक नाम अभद्र सा होता है। इस नाम को रखने से बच्चे को बुरे प्रभाव से बचाने की भावना शामिल होती है। वैसे माता–पिता या परिवार के बड़े–बूढ़े द्वारा रखा गया नाम ही प्रायः प्रयोग में लाया जाता है। बच्चे की मां अथवा बच्चे की बीमारी के साथ झाड़–फूंक करने वाले ओझा या सयाने की सेवा ली जाती है। इस प्रकार के कुछ और भी अंधविश्वास चमार लोगों में प्रचलित हैं, जैसे–यदि किसी बच्चे के जन्म के समय दांत निकले होते हैं तो उसे अपशकुन माना जाता है और परिवार के किसी व्यक्ति की मृत्यु की आशंका का विश्वास किया जाता है। इसके उपचार के रूप में बच्चे के मामा के द्वारा पिछवाड़े से चांदी के दांत फिंकवाए जाते हैं। ऐसे बच्चे पहले जन्म के राक्षस पैदा हुए, इसी प्रकार के और भी बहुत सारे अंधविश्वास प्रचलित हैं, जो शिक्षा के प्रचार–प्रसार के साथ कम होते जा रहे हैं।

बिरादरी के सदस्य बनने की मान्यता के बारे में लोगों के अलग–अलग मत हैं। कुछ लोग पहली बार बाल कट जाने के बाद ही बच्चे को बिरादरी में शामिल मान लेते हैं, दूसरे विचार के लोग दूध के दांत गिरने के बाद या लगभग आठ वर्ष का हो जाने पर इस लायक मानते हैं। कुछ लोग विवाह को शुरू का रीति कर्म मानते हैं, जब लड़के को बिरादरी का सदस्य मान लिया जाता है, तभी उसे सामाजिक व्यवहार के कार्यों के योग्य करार दिया जाता है।

शादी–विवाह

चमार लोगों में खासतौर से अपने आस–पास के क्षेत्र तथा पहले से चले आ रहे सम्बन्धों में से अपनी उपजाति में ही शादी–विवाह का चलन है। परन्तु कहीं–कहीं दो उपजातियों के बीच विवाह सम्बन्ध कायम कर लिए जाते हैं, उदाहरण के तौर पर घुसिया और कनौजिया तथा जटिया और काइयां आपस में शादी–विवाह कर लेते हैं। दो उपजातियों के बीच शादी की सख्ती विशेषतौर से अपनी लड़की दूसरी उपजाति में देने पर अपनायी जाती हैं, लड़की लेने में नहीं। जिस प्रकार 'कुरील' 'दोहरे' जाति की लड़की लेने में अधिक सोच–विचार नहीं करते, परंतु अपनी लड़की की शादी दोहारों के लड़कों से होने नहीं देंगे। बिरादरी तौर पर विवाह के बंधनों की अवहेलना करने पर बिरादरी की पंचायत जो दण्ड देती है, उसका भुगतान कर देने पर अथवा बिरादरी के लोगों को भोज देने पर पंचायत की ओर से बिरादरी में बने रहने की माफी मिल जाती है।

चूंकि अलग–अलग उपजातियाँ अपने–अपने व्यवसाय करते हैं, यह पेशा (व्यवसाय) दो उपजातियों के आपसी विवाह–सम्बन्धों में बाधा का कारण होता है। जिस जाति के लोग कूड़ा (गोबर) तथा पाखाना आदि उठाने का काम करते हैं, वे साईस का काम करने वाली उपजाति के लोगों के साथ विवाह–सम्बन्ध नहीं बनाते। इसी प्रकार पंजाब के रैदासी मरे हुए पशुओं का चमड़ा उतारने वाले जटिया उपजाति के लोगों से सम्बन्ध नहीं करते। कहीं–कहीं चमड़ा कमाने का काम करने वाले कुरील, जूती बनाने वाले कुरीलों के साथ विवाह–सम्बन्ध स्थापित नहीं करते। यह सबसे अहम बात है कि चमार अपने गोत्र में विवाह नहीं करते और चचेरे, ममेरे, फुफेरे लोगों में भी आपस में विवाह–सम्बन्ध बनाने की प्रथा नहीं है।

किंचित जगहों पर उन परिवारों के साथ ही विवाह–सम्बन्ध बनाने की मनाही है, जहाँ से माँ, दादी तथा पड़दादी आई हो। एक व्यक्ति, दो सगी बहनों के साथ विवाह तो कर सकता है, लेकिन एक साथ उन दोनों सगी बहनों को पत्नी के रूप में नहीं रख सकता। यह तय है कि उनमें एक बहन छोटी होती है। वह अपने साले या साढू की लड़की के साथ विवाह किसी भी रूप में नहीं कर सकता। आमतौर पर विवाह–संबंध लड़का–लड़की के माता–पिता तथा रिश्तेदारों की सहमति से तय होते हैं, जिसमें पुरुषों की भूमिका मुख्य होती है, लेकिन इसमें महिलाओं की सलाह भी ली जाती है। विवाह को एक समझौता नहीं, बल्कि एक धार्मिक संस्कार समझा जाता है।

विवाह–संबंध में बिचौलिये की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। वह जब दोनों ओर की जरूरी जानकारी एक दूसरे को दे देता है, तब दोनों पक्षों के लोग आपस में बात करते हैं, और यदि आपस की सहमति बन जाती है, तो लड़की का पिता, लड़के के पिता को रोके के रूप में एक रूपया या उसके आस–पास धनराशि देता है, कहीं–कहीं यह राशि लड़के के हाथ में ही दी जाती है। इसके बाद मंगनी (सगाई) की तारीख तय की जाती है और निश्चित तारीख पर लड़की का पिता निकट सम्बन्धियों तथा यार–दोस्तों के साथ सगाई के लिए लड़के के घर जाता है और लड़के को एक रूपया देकर चावल, हल्दी या दही का टीका लगाकर अपनी पुत्री को सौंपने की बात दोहराया है। यह रूपया देकर सगाई पक्का होने की निशानी समझा जाता है।

सगाई में लड़की के पिता की ओर में दूब भी दी जाती है। दूब का पहला अर्थ है, दूब की तरह जुड़े रहना दूसरा कि संबंध दूब की तरह रहे, सूखे नहीं तीसरा हरियाली का भी प्रतीक है। इसके बाद लड़का यह राशि और उसके साथ प्राप्त अन्य सामान को लेकर अपनी मां के पास पहुँचता है, जो गाना–बजाना करने वाली औरतों के पीछे विराजमान होती है, और उसे वह सौंपता है। इसके बाद लड़के का पिता सभी उपस्थित लोगों का मुँह मीठा कराता है और बाद में रिश्तेदार (लड़की पक्ष) तथा सम्बन्धियों को दारू पिलाता है। फिर शाम को वह सब लोगों को भोज देता है। लड़की वाले अगले दिन जाने के समय दुबारा लड़के को एक रूपया देते हैं। हालांकि की सगाई बहुत सोच–विचार के बाद होती है और इससे रिश्ता बहुत मजबूत हो जाता है, लेकिन पंचायत की सहमति के बाइस रूपये या इसके बराबर राशि देकर दोनों में से कोई भी पक्ष इस संबंध को तोड़ सकता है।

सगाई की रस्म पूरी हो जाने के बाद जब सामान्यतः लड़के के दूध के दांत गिर जाते हैं और लड़की भी लगभग आठ वर्ष की आयु पूरी कर लेती है, तो लड़की के माता–पिता शादी की तारीख निश्चित करके लगन की चिट्ठी भेजते हैं और उसके साथ उपहार स्वरूप नौ गज कपड़ा, ढाई–सेर, पांच सेर या दस सेर अनाज, दो सुपारी, पीले रंगे हुए चावल के थोड़े दाने, पांच हल्दी की गांठ, तथा लगन की चिट्ठी, जिस पर इस प्रथा के नियम अंकित रहती है, भेजता है। जब लड़के घर चिट्ठी आदि पहुँच जाते हैं, तो लड़के का पिता अपने संबंधियों और मुखिया को सूचित करता है कि लगन आई है। इस अवसर पर औपचारिक लेन–देन तथा खान–पान का कार्यक्रम चलता है। फिर विवाह की तिथि की घोषणा होती है। लगन के साथ लड़के की मां के लिए सगाई के दौरान दिये गये रूपये तथा कपड़े दिये जाते हैं।

शादी–विवाह का यह उत्सव 15 दिन चलता है। हफ्तों पहले लड़के तथा लड़की बाहर के मिट्टी लाने का काम करते हैं और पान लगाने अर्थात लड़का–लड़की को तेल–उबटन लगाने व नहलाने की कार्रवाई होती है। बाहर से लाई गई मिट्टी से ही शादी का भोजन तैयार करने के लिए भट्टी बनाई जाती है। परिवार की चक्की की मरम्मत की जाती है और कहीं–कहीं बिना किसी रस्मों–रिवाज के मिट्टी लाने का काम होता है। इसी बीच औरतें कुम्हार के घर अनाज लेकर जाती है और चाक पूजती हैं। वैसे देखें तो कुम्हार के चाक पूजने से कोई प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष लेना–देना नहीं है, लेकिन यह पूरी दुनिया के चक्र की तरह परिवर्तन का सूचक जरूर है और

जीवन के नए 12 बदलाव या बुद्ध धर्म की भी प्रतीक है। साथ ही महिलाएं विवाह मंडप को सजाने–संवारने के लिए प्रयोग होने वाले तथा घर में प्रयोग होने वाले बर्तन लेकर आती है।

इस दिन ''बूढ़े बाबा'' की पूजा की जाती है, मंढा भी उसी दिन चढ़ाया जाता है कुछ स्थानों पर लड़की वाले बारात आने वाले दिन भी मंढा चढ़ाते हैं। घर में घुसने के स्थान पर लगाने के लिए मामा दूब (घास) की रस्सी बनाता है। कहीं–कहीं द्वार पर डैने वाला पंखा लटकाने का भी चलन हैं। जो जगह हवन के लिए नियत होती है, वहीं पर मंढा बांधा जाता है। शादी के लिए प्रयुक्त आंगन में गोबर से चौक बनाकर उस पर चूने की आड़ी–तिरछी लाइने खींची जाती हैं और उसके ऊपर एक पीढा (पटरा) रखा जाता है, जिस पर कलावा बांधा जाता है। तत्पश्चात एक बर्तन में पानी और एक बर्तन में उबटन होता है, उन दोनों पर भी कलावे बंधे होते हैं। इस पटरी पर ही कन्या को बैठाया जाता है। कहीं–कहीं लड़की के पीढ़े पर बैठाने से पहले देवी–देवताओं को पूजा जाता है। कुछ स्थानों पर सात औरतें बारी–बारी से कन्या के सिर पर दूब घास में उबटन (बुटना) लगाती है।

विवाह से पहले छः बार हल्दी (उबटन) मलने का काम होता है और लड़की के हाथों में गुड़ एवं चावल देकर पहले से तय स्थान पर ले जाते हैं। आखिरी बार तेल–उबटन का यह काम विवाह के दिन ही किया जाता है। इस दौरान लड़के का 'फूफा' जिसे 'नेगी' की संज्ञा दी गई है अर्थात् वह नेग का पात्र है, वह घर के आंगन में एक जगह पर रहता है और लड़के को भी नहाते समय इसी स्थान पर खड़ा करते है। इसके बाद लड़के को नहलाने की रस्म अदायगी होती है और सबसे पहले उसके सिर पर कुम्हार के यहाँ से लाए गए बर्तन (करवे) का पानी डालते हैं। बारात चढ़ने अर्थात् बारात के लिए प्रस्थान करने से पहले दूल्हे की मां उसकी आरती उतारती है, जिसका मतलब है कि उसका आरता करती है, जिसमें आटे के बनाए हुए सात दीये (दीपक) सूप या किसी बर्तन में रखकर लड़के के सिर पर सात बार वारती है और फिर इन सभी दीपों को अलग–अलग दिशाओं में फेंक देती है, फिर इसी प्रकार सात बार पानी वारती है, प्रत्येक बार थोड़ा–सा पानी जमीन पर भी छिड़कती जाती है, फिर मूसल, बट्टा और दूल्हे की मां का ओढ़ना उसके सिर पर वारे जाते हैं।

ये सब करने के बाद लड़के की माँ कुएँ के किनारे (जगत) बैठ जाती है और उस पर अपना पैर रखकर उस कुएं में गिरकर मरने का नाटक करती है। इस प्रकार से आत्महत्या का नाटक वह इस कारण करती हैं कि दूल्हा नई दुल्हन लाने के बाद उसकी अवहेलना करेगा और पहले की तरह उसका ध्यान नहीं रखेगा। फिर उसे मनाने के लिए लड़का आता है और उस कुएं के सात चक्कर लगाकर उस पर आटे तथा हल्दी से अपनी उंगलियों की छाप अंकित करता है और अपनी माता को बराबर ध्यान रखने का आश्वासन देकर और उसकी देखभाल के लिए बांदी लौड़ी लाने की बात कहकर घर ले जाता है। फिर लोहे की छड़ में जो पूड़ी पिरोई होती है, उसे वह कुएं में छोड़ देता है और आकर बारात में शामिल हो जाता है। अपने गांव के इष्ट देवी–देवताओं का आज्ञा लेकर सब लड़की के घर के लिए चल पड़ते हैं।

जिस समय बारात गाँव के निकट लड़की पक्ष द्वारा निर्धारित स्थान पर पहुँच जाती है, तब वहाँ पर लड़की वालों की ओर से बड़े–बूढ़े तथा रिश्तेदार आते हैं और गोरे की रस्म अदायगी होती है। इन सारी औपचारिकताओं के बाद दूल्हा सज–धजकर बारात और बैंड बाजे के साथ दुल्हन के घर जाता है। वहाँ उसे पर्दे की ओट देकर रोक दिया जाता है, जहाँ दुल्हन सखी–सहेलियों के बीच होते हुए चौरी–छिपके दूल्हे को देख लेती है और उसके माथे पर चावल मारती है। इस रस्म को 'बारोठी' कहा जाता है, मतलब यह 'वर ठीक' है अर्थात लड़की की सहमति का प्रतीक है। उसके बाद असली ब्याह सम्पन्न होता है और लड़के के फूफा लड़के को लड़की के साथ बैठा देता है अथवा दोनों एक दूसरे के सामने होते हैं। कहीं–कहीं लड़की को बाईं तरफ तथा कहीं दाईं तरफ बैठाया जाता है।

इसके बाद शादी की मुख्य रस्म भावर, फेरे डालने की कार्यवाई प्रारम्भ होती है, जो देर रात तक चलती है। फेरों से पहले वधू की चुनरी का एक कोना वर की चादर से बांधते समय गांठ में तांबे के सिक्के रखे जाते हैं। सात फेरों को वर–वधू में बराबर बांट दिया जाता है अर्थात् साढ़े तीन फेरों में वर आगे होता है और साढ़े तीन फेरों में वधू आगे चलती है। कहीं पर छः फेरों में वर आगे और एक में दुल्हन आगे रहती है।

फेरों के पश्चात सामूहिक भोज होता है और लड़के पक्ष की ओर से बारातियों को जमकर शराब पिलाई जाती है और एक बोतल बिरादरी को, एक बोतल लड़की वालों को और एक बोतल बिचौलियों को दी जाती है। बिचौलिये को नेग स्वरूप कपड़े तथा धन राशि भी दोनों तरफ से दी जाती है। पता नहीं शराब पीने की प्रथा चमारों को कब से और कहाँ से आई, लेकिन पहले लोग इसका सेवन बड़े संकोच से करते थे, जबकि आज स्थिति बिलकुल विपरीत है। विवाह के दौरान वर और वधू के लिए घर–गृहस्थी में काम आने वाले जरूरी सामान ही उपहार में दिए जाते थे, जो पटटे के दौरान बकायदा गिनती करके वर पक्ष को सौंपे जाते थे और वह पास की सामर्थ्य के अनुसार ही होते थे। न कि अनाश्यक दहेज, और दहेज की मांग करना सम्मानजनक नहीं समझा जाता था। ऐसे लोगों को खानदानी की संज्ञा नहीं दी जाती थी। दुल्हे के रिश्तेदारों को भी सम्मान स्वरूप मिलाई के तौर पर सामर्थ्य के अनुसार पैसे दिये जाते थे। लेकिन आजकल दूसरों की देखादेखी चमारों में भी दहेज मांगने की बीमारी आ गई है, जो बहुत घातक, जिसका परित्याग किया जाना सामाजिक और कानूनी तौर पर भी बहुत जरूरी है।

शादी में भात देने का जो रिवाज रहा, वह एक दूसरे का हाथ बंटाने का प्रतीक था, जो आपसी सदभाव की अनूठी मिसाल थी। बारात विदा होने के समय तो हल्दी की छाप लगाने की प्रथा चली आ रही है, वह पंचशील का सूचक प्रतीत है। यह कितनी बड़ी समझ अभी चमारों में पाई जाती है कि विदाई होने से पहले पट्टे के दौरान लड़की की शादी में भी मिट्टी के बर्तन उपलब्ध कराने वाले कुम्हार का खर्चा, चूड़ी पहराने वाली मनिहारिन का खर्चा, दोघड़ से पानी पिलाने वाली का खर्चा, नाई का, सफाई वाले, ढोल वाले का, मंदिर के चौकीदार का, यहाँ तक कि दाई का खर्चा लड़के वाला अदाकरता था, ताकि लड़की वाले पर कोई बोझ न पड़े। फेरे मिलाई, पट्टे आदि के बाद दुल्हन की विदाई की तैयारी शुरू हो जाती है। इस अवसर पर लड़की का पिता निवेदन स्वरूप कहता है–''हमारे पास लड़की ही है और कुछ नहीं है और वही हम आपको सौंप रहे हैं, उसे कोई दुःख तकलीफ न हो।'' इससे पहले लड़की पक्ष की ओर से महिलाएँ लड़के को घेर कर खड़ी हो जाती हैं और उसे पैसा भेंट करके वापिस लौट जाती हैं।

वधू पक्ष की ओर से सारी कार्यवाही पूर्ण होने के उपरान्त दूल्हा–दुल्हन वर के घर पहुँचते हैं, तो सबसे पहले दुल्हन अपनी सास के चरण–स्पर्श करती हैं, कहीं–कहीं दुल्हे के भाई–बहन भी वधू के पैर छूते हैं। दुल्हन परदे में होती है और दूल्हे के परिवार की औरतों की ओर से कुछ न कुछ उपहार भेंट किये जाते हैं। इस रस्म को मुँह दिखाई कहा जाता है। लड़का और लड़की के हाथों में जो कंगना बंधा होता है, उसमें सात गांठें होती हैं। अगले दिन कंगना खिलाई या खुलाई की रस्म पूरी की जाती है और दोनों एक दूसरे का कंगना खोलते हैं। उनमें जो पहले खोल देता है, उसे ही जीता हुआ माना जाता है।

यह भी एक समझदारी का प्रतीक है कि यदि विवाह के समय वर–वधू सही उम्र के होते हैं, तो शादी की रस्म यहीं पूरी हो जाती है, नहीं तो 14–15 वर्ष की होने तक लड़की अपने माता–पिता के घर पर ही रहती है। जब दोनों गृहस्थ संबंध के अनुकूल आयु के हो जाते हैं, तब ''गौना'' किया जाता है। यह शुभ कार्य लड़की की आयु चौदह वर्ष और लड़के की आयु सोलह वर्ष होने पर ही सम्पन्न होता है। इस प्रकार ''गौना'' शादी के बाद पहले, दूसरे पांचवें, अथवा सातवें वर्ष बाद होता है। तीसरे, चौथे या छठे साल में इसे उचित नहीं माना जाता। अब गौने की प्रासंगिकता लगभग खत्म हो गई है, क्योंकि वयस्क आयु में ही लड़के–लड़कियों की शादी होने लगी है, और सरकार की ओर से भी 18 वर्ष से कम उम्र की लड़की की शादी को असंवैधानिक करार दिया गया है।

इन सारे विश्लेषणों से स्पष्ट होता है कि चमारों में जीवन के प्रमुख संस्कारों में विवाह के तीन भाग होते हैं, सबसे पहले जिसे इसकी शुरूआत होती है, उसे 'मंगनी' कहा जाता है, जिसका तात्पर्य है, एक दूसरे से जुड़ जाना, जो बच्चों की छोटी उम्र में ही तय हो जाती है। दूसरे भाग के रूप में 'शादी' या विवाह का नम्बर आता है, जो सामान्यतया बचपन में होती है। सबसे अन्तिम और तीसरा भाग है – ''गौना'' जब वर–वधू गृहस्थ संबंध स्थापित करने की आयु के हो जाते हैं। वैसे तो विवाह–संस्कार के बारे में लोगों के विभिन्न मत हैं, लेकिन फेरे पड़ने को लगभग सभी आवश्यक समझते हैं।

अन्य विशेषताएँ

व्यापक रूप से देखा जाए तो चमार एक बहुसंख्या वाली जाति ही नहीं, बल्कि एक समाज है, जिसकी अपनी मान्यताएँ हैं, आत्मनिर्भरता जिनके मूल में हैं और उसने कहीं ब्राह्मणवादी परम्पराओं का अन्धानुकरण नहीं किया है। चाहे उपासना पद्धति हो, देवी–देवता, रहन–सहन हो, खान–पान हो, व्यवसाय हो, कला–कौशल हो, चाहे लोकगीत अथवा रीतिरिवाज सब उसके अपने हैं। कर्मठता से तो उसका जन्म–जन्म का नाता है।

इतिहास गवाह है कि उसे किसी भी कार्यव्यवहार सम्पन्न करने में तथाकथित सवर्ण जातियों के सहारे की आवश्यकता नहीं रही, उल्टे दूसरी जातियों का काम ही उसके बिना नहीं चलता था। मेहनत–मजदूरी में वह सबसे अव्वल था और कुशल भी था। चाहे खेत जोतने का काम हो, बुवाई या नलाई–छंटाई हो, गुड़ाई हो अथवा खेत में पानी देना हो या खेत की देखभाल करनी हो, फसल को काटना हो या पकी फसल में अनाज को अलग करना हो या फिर अनाज को ढोकर गोदामों में सुरक्षित रखवाना हो। यही नहीं, बाजार में बेचने तक ले जाने में भी उसकी भूमिका थी। इसी प्रकार ईख काटना, ढोना, कोल्हू में पिराई और गुड़–शक्कर बनाने तक के काम में उसकी जरूरत थी। फिर, चमार के हाथ से ही खेत से कपास को चुनने, उससे सूत कातने और फिर उस काते गए सूत से बुनकर कपड़ा तैयार करने, चमड़े से जूती व चप्पल बनाने, पानी खींचने के लिए चरस व डोल, घी–दूध रखने की कुप्पियाँ, सामान के लिए थैले, पशुओं के लिए पेट्टी, सांटे, घोड़े एवं बैलों की डोरी एवं जीन आदि बनाकर सुलभ कराने के कामों को चमार जाति के लोग बड़ी कुशलता के साथ अंजाम देते थे।

उपरोक्त कामों के अलावा सवर्णों की सुरक्षा के लिए पहरा देने का काम, उनके पशुओं को चराने का काम, कुएं–खोदने, पंचायत घर एवं मंदिर बनाने तथा मृत पशुओं को ठिकाने लगाने का काम भी चमार ही करते थे। चमारों की औरतें दाई के रूप में सुविधाजनक ढंग से बच्चे पैदा कराने तथा प्रसव काल में उनकी देखभाल का दायित्व निभाती थीं। इस प्रकार सम्पूर्ण सवर्ण समाज जीवन के सभी महत्वपूर्ण कार्यों के लिए चमारों पर निर्भर था। इसके विपरीत चमार को कहीं भी दूसरों की सहायता की जरूरत नहीं पड़ती थी, क्योंकि भगत–सयाने, भाट, दाई, नाई, पंडित, बिचौलिए, गाने वाले तथा ढोल, घड़ा, चिमटा एवं बैंड आदि बजाने वाले चमार जाति में ही विद्यमान थे। नाई के तो कई काम होते थे, वह बाल बनाने के साथ–साथ शादी में न्योता–बांटने का काम भी करता था। पंडित नामकरण से लेकर ब्याह–सगाई की चिट्ठी बनाने और सुझाने से लेकर हवन–फेरे तक के सारे काम करता था। भाट पुरखों के जीवन–मरण का लेखा–जोखा रखते थे।

चमार समाज नारी अस्मिता के खिलाफ हमेशा लड़ा, सती प्रथा को जीवन–पद्धति में स्थान नहीं दिया और न ही उसे वैधव्य का शापग्रस्त जीवन जीने को विवश किया। इस प्रकार की और भी बहुत सारी विशेषताएँ हैं, जिनसे उसका स्वावलम्बी और मानवीय पहलू उजागर होता है, जो दूसरों के लिए भी अनुकरणीय हैं, उनका विवरण निम्नलिखित हैं –

न्योता प्रथा –

चमार समाज में प्रचलित न्योता–प्रथा बहुत ही सूझबुझ और आत्मनिर्भरता का सूचक है। इस प्रथा के कारण ही चमार जाति के लोगों को शादी–ब्याह में होने वाले खर्च के लिए किसी भी रूप में बनिये, साहूकार अथवा जमींदार के सामने हाथ फैलाने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। इस प्रथा के अनुसार लड़का अथवा लड़की की ब्याह–सगाई अन्य प्रकार के सामाजिक अवसरों पर 'न्योता' डाला जाता था और जिसे बाकायदा कमलबन्द अर्थात बही में रिकार्ड के लिए लिखा जाता था। जिस व्यक्ति को भी ब्याह–सगाई में नियंत्रित किया जाता था, वह न केवल उसमें शामिल होता था, बल्कि न्यौते के रूप में नकद राशि व कपड़े या अन्य सामान देता था।

आपसी समरसता की एक और खास बात यह थी कि

किसी वजह से परिवार अथवा गांव का पहले से शादी में शामिल होता रहा व्यक्ति 'न्योता' नामंजूर कर देता था, उस परिवार के बड़े–बुजुर्गों की बात की अवहेलना नहीं करता था। फिर 'न्योता' देने वाले व्यक्ति के यहाँ इसी प्रकार का कोई शुभ अवसर आता था तो 'न्योता' लेने वाला उससे दोगुना न्योते के रूप में लिखवाता था। यह परम्परा पीढ़ी–दर–पीढ़ी चलती रहती थी। निश्चित रूप से इस प्रथा से ब्याह–सगाई करने वाले व्यक्ति पर बोझ नहीं होता था और 'न्योता' डालने वालों पर कोई फर्क नहीं पड़ता था। इस तरह गरीब से गरीब व्यक्ति के बच्चों की शादी भी बड़ी आसानी से और हंसी–खुशी के वातावरण में सम्भव हो जाती थी।

विधवा विवाह

जहाँ नारी की पूजा होती है, वहाँ देवता निवास करते हैं, ऐसी उद्घोषणा करने वाले हिन्दू शास्त्रों में विधवा विवाह का निषेध और सती प्रथा का प्रावधान किया गया है। दोनों ही व्यवस्थाएँ नारी अस्मिता के प्रतिकूल ही नहीं, अपितु नारी जीवन को असहनीय पीड़ा से ओत–प्रोत बनाने वाले है। विधवा विवाह निषेध के दंश से अभिभूत होकर सत्यशोधक समाज के संस्थापक महात्मा ज्योतिबा फुले ने विधवाओं की प्रसूति के लिए अस्पताल खोला था। परंतु मानवीय संवेदनाओं से ओत–प्रोत चमार जाति में सदियों से विधवा विवाह का प्रचलन रहा है और विधवा स्त्री को भी सधवा नारियों की तरह ही जीवन यापन का अधिकार है। यहाँ विधवा विवाह को पूरी तरह मान्यता है। सन् 1891 में चमारों को एक समूह के अन्तर्गत रखा गया था, हालांकि उस समय विधुर एवं विधवाओं की संख्या कम थी, परन्तु 1911 की जनगणना रिपोर्ट से यह सिद्ध होता है कि बीस से चालीस वर्ष के बीच के अकसर सभी विधुर एवं विधवाओं का पुनर्विवाह हो जाता रहा है।

विधवा विवाह का जो चलन है, उसके अनुसार यदि जवान आयु में कोई स्त्री विधवा हो जाती है, तो उसके मृत पति का छोटा भाई अगर घर–गृहस्थी के कार्य में सक्षम होता है, तो सामान्यता उसके साथ ही उसका विवाह करा दिया जाता है। यदि भाई के यहाँ कोई बाल–बच्चा नहीं होता, तो मृत व्यक्ति के छोटे भाई का विवाह अक्सर निश्चित ही होता है। इसमें भाई का वंश चलाने की कोई भावना नहीं होती। यदि विधवा के कई देवर होते हैं, तो उनमें से आयु तथा दूसरी परिस्थिति को देखकर किसी के भी साथ उसका विवाह कर दिया जाता है। यदि कोई अन्य विकल्प न हो तो विधवा के जेठ और बहन के पति (जीजा) के साथ भी उसकी शादी हो सकती है, लेकिन इसमें शर्त यह है कि या तो जेठ की पत्नी या जीजा की पत्नी यानी उसकी बहन की मृत्यु हो चुकी हो अथवा वह इस संबंध के लिए सहमत हो। समाज में व्यभिचार को रोकने और नारी के मनोभावों को आयाम देने के लिए यह व्यवस्था बहुत कारगर है।

सुदढ़ पंचायत व्यवस्था

चमार आदिकाल से लोकतांत्रिक जाति रही है। इसके पूर्वज राजनीति में भी पूर्णतया दक्ष थे। उन्होंने शुरू में नगर की व्यवस्था बहुत अच्छी प्रकार से की, बाद में चमार जाति के राजा–महाराजा भी हुए, जिन्होंने राजकार्य को बहुत भली–भांति चलाया। परन्तु आर्यों के भारत में प्रवेश के कारण इस व्यवस्था को धक्का लगा। ऐसे समय में उनकी स्थिति अकेलेपन के कारण थोड़ी कमजोर तो हो गई, लेकिन उन्होंने संयम से काम लिया और इस दौर में भी चमार शासन–संचालन के लिए किसी पर आश्रित नहीं हुए और दूसरों को अपने ऊपर हावी भी उसने नहीं होने दिया। चमारों की पंचायत–व्यवस्था शुरू से ही बहुत मजबूत रही है। विस्तार की दृष्टि से गांव की पंचायत और आठ गांवों की पंचायत, उसके बाद बारह गांव की पंचायत तथा बावनी की पंचायत और सबसे बड़ी तीन सौ सात गांवों की पंचायत होती है। इससे स्पष्ट है कि चमार जाति की अलग पंचायत–पद्धति रही है और निष्पक्षता तथा तार्किकता जिसकी प्रमुख विशेषताएं है, जिसमें चार या पांच पंच शामिल होते हैं। उनका एक चौधरी होता था, जो परस्पर विचार–विमर्श करके फैसला देते थे। चमार पंचायत का फैसला सभी मानते थे। जिस प्रकार कोर्ट के स्तर तय होते हैं, तहसीलदार, एस.डी.एम, कोर्ट से अगर संतुष्टि नहीं होता, तो वे जिला जज की अदालत में अपील कर सकते हैं, इसी प्रकार गांव की या आठ गांव की पंचायत से जो पक्ष संतुष्ट नहीं होता, वह उससे बड़ी पंचायत में विचार के लिए अपना मामला प्रस्तुत कर सकता था। चमारों की पंचायत में दूसरे लोग, सुनने और सीखने के लिए आते थे।

चमारों की पंचायत को लोकप्रियता के बारे में कहावत चली आ रही है कि एक बार मुगल बादशाह अकबर ने अपने वजीर बीरबल से पूछा कि बिरादरियों की पंचायत में से तुम्हें किस बिरादरी की पंचायत पर भरोसा है, तो बीरबल ने बेझिझक उत्तर दिया कि मुझे चमारों की पंचायत पर भरोसा है, इसका कारण है कि उनके फैसले काफी सूझबूझ और विचार–मंथन के बाद न्याय पर आधारित होते हैं। इस परिपक्व पंचायत व्यवस्था के कारण चमार अपने सभी आपसी झगड़े और विवाद बहुत आसानी से निपटा लेते हैं और सभी को उस पर और पंचों पर भरपूर विश्वास है और पंच भी इस बात का बराबर ख्याल रखते हैं कि किसी के साथ ज्यादती न हो जाए।

इस प्रकार बुद्धि और बल से जब चमार सब पर भारी पड़ रहा था, इसे तोड़ने के लिए सवर्ण लोगों ने तरह–तरह के हथकंडे अपनाए और फिर काम के आधार पर उन्हें उपजातियों का नाम देकर विभाजित कर दिया और इस मजबूत एकता को खण्ड–खण्ड करने में इन संकीर्ण दिमागी लोगों ने सफलता प्राप्त की। इस जाति के जो लोग शरीर से बलिष्ठ थे और लड़ाकू होने के साथ–साथ सेवा–कार्य में भी माहिर थे, उन्हें 'महार' नाम देकर अलग जाति का रूप दे दिया। पहरा देने वालो को पासवां (पहरेदारों) से पासी या पासवान नाम दे दिया। दुश्मन (अहीर) को मारने वालों को अहिरवाल व संखवार, धन कूटने वालों को धानुक, कपड़ा बुनने वालों को जुलाहा और जिन्हें जीतना दुसाध्य अर्थात मुश्किल था, उन्हें दुसाध की संज्ञा दे दी। जूती गांठने वालों को 'मोची', जीन व काठी बनाने वालों को 'जीनार' और चमड़ा रंगने वालों को रेंगर नाम देकर चमार जाति के संगठन को तार–तार कर दिया।

यही नहीं, सतनामी, रामनामी, आदिधर्मी, धासीपंथी, रविदासी तथा कबीरपंथी आदि नाम देकर संप्रदायों को बांटने का नया आधार विकसित कर लिया। सवर्ण लोगों के इस सुनियोजित साजिश के तहत् दमन, शोषण और नफरत से बचने के लिए जब चमार लोगों ने धर्म बदला, तो उनकी पुरानी पहचान को कायम रखने के लिए उनके नाम के साथ मसीह या दास का दुमछल्ला लगा दिया। मुसलमान बनने वाले भी घाटे में ही रहे, क्योंकि वहाँ भी अंसारी, मोची, सक्का, बेगी के रूप में उनकी पुरानी पहचान कायम है। आर्य समाजी बनने वाले चमार 'महाशय जी' अलग ही रहे हैं और राधा स्वामी एवं निरंकारी सम्प्रदायों में अपने को उनके साथ समायोजित नहीं कर सके।

अलग–अलग उपजातियों में बंटने से चमार जाति की एकता तो छिन्न–छिन्न हुई ही, साथ ही विभिन्न सम्प्रदायों, धार्मिक समूहों में बिखराव के कारण स्वाभिमानी स्वरूप भी तहस–नहस हो गया, लेकिन इन सबके बावजूद चमार की अपनी पहचान, बुद्धि, बल, साहस और कारीगरी बराबर कायम रही। इसमें उत्तरी भारत के स्वामी अछूतानन्द हरिहर, पंजाब के बाबू मंगूराम, दिल्ली में देवीदास जाटव और बिहार में बाबू जगजीवन राम और विशेष रूप से डॉ. भीमराव अम्बेडकर के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता, जिन्होंने चमार जाति के पूर्वजों के धर्म बौद्ध धर्म को नया जीवन देकर भारत में नई दिशा और एकीकृत ताकत का मार्ग प्रशस्त्र किया।

दहेज का निषेध –

चमार जाति में दहेज की प्रथा बिलकुल नहीं थी, हां, ऐसा करने वालों के बच्चों की शादियों में बाधा की संभावना बनी रहती थी, क्योंकि लोग ऐसा करने वालों को सम्मान की नजर से नहीं देखते थे। सबसे अच्छी बात थी कि लड़की जिसके घर पैदा होती थी, उस पर बोझ नहीं बनने दिया जाता था। अब भी कई पुराने लोग कहते हुए मिल जाएंगे कि लड़की दान करने वाला ही बड़ा होता है। उधर मामा–नाना की ओर से उसका हाथ बंटाया जाता था, इधर लड़के वाला भी दहेज तो कतई मांगता ही नहीं था, बल्कि शादी के खर्चे के तौर पर निकाली जानी वाली पंचायतों द्वारा निर्धारित राशि खुशी–खुशी अदा करता था, लेकिन आज दूसरों की देखादेखी इस बिरादरी में यह बीमारी के रूप में प्रवेश कर गई है, जिसमें बिरादरी के गरीब लोगों के लिए लड़की की शादी करना बहुत पीड़ादाई बनता जा रहा है। इस पर लगाम लगाने के सामूहिक प्रयास किए जाने की सख्त आवश्यकता है।

परिश्रमी और संतोषी होने में तो चमार का कोई जवाब नहीं है। गर्मी, सर्दी और बरसात हर मौसम में यह बराबर मेहनत करता है, कभी जी नहीं चुराता और न ही किसी प्रकार की लापरवाही करता है। इसके साथ–साथ यह संतोषी प्राणी भी है, अपनी जी–तोड़ मेहनत के बदले अनाज, गुड़, शक्कर राब या नकद राशि के रूप में जो कुछ भी मिलता है, उसे ही खाकर यह संतुष्ट हो जाता है।

संगीत प्रेमी और प्रकृति पूजक

गीत–संगीत तो चमार की रग–रग में बसा है। लोक नृत्य, गीत–संगीत तो इसके जीवन का हिस्सा है। इसलिए आल्हा, ढोला, स्वांग–तमाशे पूरे साल चलते रहते हैं, जिससे यह पूरे दिन का थकान मिटा लेता है और फिर बड़ी चैन की नींद का आनन्द लेता है। लोक संगीत के माध्यम से वीर रस से सरावोर किस्से इसे जीवन में संघर्ष से जूझने को ताकत प्रदान करते हैं और आशा की नई किरण के साथ अगले दिन काम आरंभ करते हैं।

इसमें कोई दो राय नहीं कि चमार जाति प्राचीन काल से ही प्रकृति की पूजा में विश्वास करती है। इसके अतिरिक्त अहिंसकता और शांतिप्रियता इस जाति की विशेष पहचान रही है। इतिहास गवाह है कि इन्होंने यज्ञों में आर्यों द्वारा की जाने वाली हिंसा का हमेशा प्रतिरोध किया इसके बदले में ही इन्हें आर्यों का दमन और शोषण झेलना पड़ा, लेकिन इन्होंने भी हार नहीं मानी। एकलव्य का द्रौणाचार्य द्वारा दाएं हाथ का अंगूठा काट लिए जाने के बावजूद बाणचालन में बाएँ हाथ से ही पहले जैसी ही पारंगतता की मिसाल शायद दुनिया में दूसरी मिले और रामचन्द्र द्वारा शम्बूक का शीश काटना हिंसा का नायाब नमूना है। लेकिन जब भगवान बुद्ध ने अहिंसा परमो धर्म का नारा लगाया, तो चमार जाति ने बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया।

समय की पुकार

डॉ. अम्बेडकर के सपनों का समतावादी भारत बनाने और अपने सम्मुख उपस्थित सामाजिक और आर्थिक चुनौतियों का मुकाबला करते हुए अपने अस्तित्व को बचाने के लिए संपूर्ण चमार जाति के लोग संगठित हों, महापुरुषों गौतम बुद्ध, संत शिरोमणि गुरु रविदास, सतगुरु कबीर, डॉ. अम्बेडकर और बाबू जगजीवन राम की भावनाओं को समझें, उनके विचारों का अनुसरण करें। उनको जाति विशेष के दायरे में रखकर मूल्यांकन न करें। ये सारे भारत के थे और समग्र दलित–शोषित समाज के हितैषी थे। आस्थागत (धार्मिक) रूप से यदि एक सूत्रता संभव न हो, तो सामाजिक मुद्दों पर तो एक सुर में बोलें। रविदास मंदिर और बौद्ध विहारों में स्कूल व कॉलेज स्थापित करें, जिनमें समय की आवश्यकतानुसार व्यवसायिक तथ तकनीकी शिक्षा पर जोर दिया जाए।

यह एक कटु सत्य है कि धर्म का चोला बदलने के बावजूद चमारों की हैसियत में कोई परिवर्तन नहीं आया। इसलिए अपनी कर्मठता और बुद्धि के प्रयोग से सामाजिक एकता और आर्थिक मजबूती ही दूसरों की तुच्छ मानसिकता बदलने में सक्षम हो सकती है।

संगठन के स्वरूप के बारे में गुरु रविदास जी ने कहा है –

''सत संगति मिलि रहिए माधउ जैसे मधुप मखीरा।''

गुरु रविदास जी ने इस पद में फरमाया है कि हम ऐसा संगठन बनाएँ, जैसे मधुमक्खियाँ बनाती हैं। वे सब एक दूसरे के साथ एक छोटे से स्थान पर साथ–साथ रहती हैं और दुनिया को मधु अर्थात् शहद प्रदान करती हैं, जो बहुत मीठा होता है। वे एक साथ मिलकर जो संगठन (छत्ता) बनाती है, उससे मिले भी लोग मधु खाते हैं, क्योंकि किसी के छोड़ने पर या तंग करने पर मधुमक्खियां एक साथ अपने दुश्मन पर टूट पड़ती हैं, ऐसे ही संगठन आज की स्थिति में कारगर है।

lkHkkj %
pekj tkfr bfrgkl vkSj lLÑfr
i`"B la[;k 44 ls 62 rd
,l-,l-xkSre
Mk- vkj-,e-,l-fot;h

क्षत्री वंश का संहारक ब्राह्मण ‘परशुराम’

सनातनी ब्राह्मणों ने परशुराम नाम के ब्राह्मण को राम का औतार बतलाकर क्षत्री वंशियों का (21) इक्कीस बार नरसंहार किया, इस सच्चाई को सभी क्षत्रिय वंश, रघुवंशी लोग जानते हैं। अगर राम का जन्म राजा दशरथ क्षत्रिय के घर हुआ होता तो राम ने अपने ही कुल क्षत्रिय वंशियों (रघुवंशियों) का नरसंहार क्यों किया होता? मेरे इस प्रश्नवाचक चिन्ह पर भारत देश के प्रत्येक क्षत्रिय वंशियों (रघुवंशियों) को बहुत ही गहन चिन्तन करना चाहिए। निश्चित ‘राम’ पुष्यमित्र शुंग का ही नाम है, जिसने भारत देश में ब्राह्मण राज्य की स्थापना के लिए क्षत्रिय वंशियों (रघुवंशियों) का एवं बौद्धों का नरसंहार करवाया था।

अयोध्या (फैजाबाद) में हिन्दुत्व के नाम पर सनातनी साधुओं द्वारा राम मंदिर बनवाना, पुष्यमित्र शुंग ब्राह्मण का मंदिर बनवाना है, भारत देश में रामराज्य की स्थापना करना, ब्राह्मण राज की स्थापना करना है। हिन्दू धर्म, ब्राह्मण धर्म है जो हिन्दुत्व के नाम पर अछूतों को दुबारा अछूत बनाने का षड़यंत्र बना रहे हैं और भारतीय संविधान को हटाकर मनुस्मृति की स्थापना करना चाह रहे हैं। आप अयोध्या (फैजाबाद) का सर्वे करो अयोध्या नगरी क्षत्रियों की नगरी नहीं है, वहाँ पर राजा दशरथ नाम का कोई क्षत्रिय राजा पैदा नहीं हुआ था, अयोध्या नगरी को पुष्यमित्र शुंग राज्य के पहले साकेत (अवध) नगरी कहा जाता था। अवध नगरी में पुष्यमित्र शुंग ब्राह्मण ने अपना राज्य स्थापित कर ब्राह्मण राज्य घोषित किया और साकेत (अवध) नगरी का नाम अयोध्या रखा। अयोध्या में ब्राह्मण लोग घर–घर में ‘राम–सीता’ का मंदिर बनवाकर भारतीय समाज को ठगने का कार्य करते हैं और व्यावसायिक दुकान, रेस्टोरेन्ट–होटल बनाकर भारतीय जनता का आर्थिक शोषण करते हैं।

अयोध्या की धरती को अवध नगरी भी कहा जाता है। अवध की धरती बौद्धों की अहिंसक धरती है, भारत सरकार को उस धरती पर बोधिसत्व बाबा डॉ० अम्बेडकर एवं वैज्ञानिक सम्राट डॉ० कलाम के नाम से विश्वविद्यालय बना देना चाहिए, जिससे भारतीय बच्चों का बौद्धिक विकास हो सके। भारत देश के मात्र साढ़े तीन प्रतिशत ब्राह्मण लोग हिन्दुत्व की आड़ में, रामराज के नाम पर, ब्राह्मण राज्य की स्थापना करना चाहते हैं। शिक्षा विभाग को भगवाकरणकर बच्चों में ब्राह्मणी शिक्षा को लागू करना चाहते हैं। यह लोग सम्राट अशोक महान की पहचान को मिटाकर राष्ट्रीय मुद्राओं पर भी गणपति का चिन्ह अंकित करना चाहते हैं। यह लोग भारतीय संविधान की धाराओं को समाप्त कर मनुस्मृति का कानून लागू करना चाहते हैं। अगर भारतीय जनता अपने अधिकारों के प्रति, भारतीय संविधान के प्रति जागरूक होकर भारतीय संविधान शिल्पी बाबा साहेब द्वारा दी गई 22 प्रतिज्ञाओं के महत्व को नहीं समझी तो देश में बहुत ही बुरे दिन देखने को मिलेंगे।

lkHkkj %
vk/kfud c) ckck lkgc dh
ckbl ifrKkvk dk fo'y"k.k
i t l[;k 44 l 45 rd
';keyky ck)

अल्जामर्स डिमेंशिया करता सोचने की क्षमता को कम

अल्ज़ाइमर्स के मरीजों को यह पता नहीं होता है कि आज कौन–सा दिन है। यही नहीं, वे अपने परिवार के सदस्यों को भी नहीं पहचान पाते हैं। सोचने की क्षमता खो देने से अधिक निराशाजनक स्थिति कोई नहीं होती है। जिस व्यक्ति ने अपने परिवार में अल्जाइमर्स डिमेंशिया बीमारी को देखा है, केवल वही इसकी भयावहता को समझ सकता है। यदि आपका कोई प्रिय अल्जाइमर्स बीमारी से पीड़ि है, तो आप इस बात से सहमत होंगे कि हमारे लिए जीवन का बेहतर होना महत्वपूर्ण है न कि इसका लंबा होना, जिसके बारे में हममें से अधिकांश लोग चिंता करते हैं। अनेक अध्ययनों से यह बात साबित हो चुकी है कि स्वतंत्र तत्वों द्वारा की गई क्षति अल्जाइमर्स डिमेंशिया का प्रमुख कारण होती है। केस वेस्टर्न रिजर्व यूनिवर्सिटी में हाल ही में किए गए शोधों से पता चलता है कि उम्र के साथ बढ़ता हुआ ऑक्सीडेटिव तनाव अल्जाइमर्स बीमारियों के सभी पहलुओं के लिए जिम्मेदार होता है।

इस बात के भी ठोस प्रमाण उपलब्ध हैं कि अल्जाइमर्स के मरीजों के मस्तिष्क में एंटीऑक्सीडेंट्स का स्तर जितना निम्न होता है, उनमें ऑक्सीडेटिव तनाव का स्तर उतना ही अधिक होता है, उनमें ऑक्सीडेटिव तनाव का स्तर उतना ही अधिक रहता है। इसमें विटामिन–ई,विटामिन–सी, विटामिन–ए, जिंकसेलेनियम तथा रियूटेन का इस्तेमाल किया जाएं तो परिणाम अच्छे आते हैं।

परिनिर्वाण : 27 मई 1935

माता रामाबाई अम्बेडकर के परिनिर्वाण के मौके पर द्रविड़ भारत व भारतीय द्रविड़ विकास संघ, युवा, विद्यार्थी, महिला की ओर से भावभीनी श्रद्धासुमन ।

इस मौके पर प्रिय पाठकों के लिए भारत रत्न डा. बाबा साहब के कुछ उनके अनमोल वक्तव्य दे रहे हैं। ‘‘माता रमाबाई बाबासाहब के संघर्ष मे जीवन भर साथ दिया’’ ।

गणतंत्र आर्मी

गणतंत्र आर्मी संगठन द्रविड़ भारत समाचार पत्र द्वारा संचालित किया जायेगा।

संगठन का मुख्य उद्देश्य ‘‘लोगो के बीच ज्ञान का प्रसार करने के लिए’’ विद्वान लोगो की सेना का निर्माण अर्थात संगठन करना।

विद्वान / ज्ञानी कौन है ?

ज्ञानी वह प्राणी है जिसने प्राणियों के जीवन को बचाने का काम किया है। यहाँ पर शैक्षिक योग्यता अर्थात किताबी जानकारी से नहीं है, पढ़ाई से नहीं है।

आपके अनुभव / अनुसंधान से है।

जैसे – किसान, जवान, मजदूर, शोधकर्ता और परिस्थितियों से लड़ाई जीतने वाले लोग।

आप सभी से अनुरोध है कि प्राणियों के दुखों का निवारण करने के लिए संगठन को विस्तार प्रदान करें यथा संभव तन–मन से सहयोग प्रदान करने का प्रयास करें।

धन्यवाद!

सहयोगाकांक्षी
उमेश्वरी देवी
सम्पादक द्रविड़ भारत

बुद्ध जयन्ती पर विशेष

सभ्यता के आदिकाल से ही सत्य की खोज हमारे महानपुरुषों के लिए चिन्तन का विषय रहा है, किन्तु वास्तव में सत्य क्या है ? आज भी तत्सम्बन्ध में चिंतनशील प्रयास जारी है। लगभग 2500 वर्ष पूर्व गौतम बुद्ध ने सत्य की खोज में अहिंसा का सूत्रपात किया था, लेकिन सत्य की खोज में इस संघर्ष को उन्होनें मानवीय दुःखों एवं उनकी सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक समस्याओं के समक्ष बहुत अल्प समझा। गौतम बुद्ध मातृभूमि पर मानवता के मध्य फैली हुई अस्तित्व की लड़ाई एवं अन्तहीन समस्याओं को सदा के लिए खत्म करने के लिए रास्ते की खोज में निकल पड़े थे। उन दिनों वैदिक कर्मकांड, जातिभेद, हिंसा तथा द्वेष का बोलबाला था। सामंती ताकतें अपनी चरम सीमा पर थी। गौतम बुद्ध ने समस्त राजशाही सुखों को त्याग कर सत्य, अहिसा और भाईचारे का आदर्श पथ ढूंढ़ निकाला, जिससे समस्त विश्व लाभान्वित हुआ। बुद्ध की इस महान मानवतावादी विचारधारा ने मानव जाति को अपने चहुमुखी विकास की दिशा में अत्याधिक सफलता प्रदान की। इस तरह गौतम बुद्ध का भारतीय मानव सभ्यता, सांस्कृतिक विकास, धार्मिक परिवर्तन एवं ऐतिहासिक निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान रहा।

शाक्य राज शुद्धोदन के पुत्र गौतम बुद्ध का जन्म लगभग 650 ई. वर्ष पूर्व लुम्बनी नामक वन में ऐसे समय हुआ, जब उनकी माता महामाया अपने प्रसवकाल के कुछ समय पूर्व कपिल वस्तु से अपने मायके "देवदह नगर" जा रही थीं। शिशुकाल में सिद्धार्थ अत्यन्त दूरदर्शी थे। भविष्य वक्ताओं ने उनके पूर्ण गुण सम्पन्नता की पुष्टि करते हुए बताया कि बालक महापुरूष होने का यश प्राप्त करेगा। पिता का "गौतम गोत्र होने के कारण उनका नाम गौतम तथा सत्य का बोध (ज्ञान) प्राप्त होने के फलस्वरूप गौतम बुद्ध पड़ा। विचारशील गौतम बुद्ध सदैव सांसारिक मानस पीड़ा एवं उसके निवारण के सम्बन्ध में सोचते रहते थे। बुद्ध की वैराग्य पूर्ण भावनाओं को देखकर पिता ने अठारह वर्ष की आयु में उनका विवाह कोलि वंशी राजा दण्डयाणि की पुत्री यशोधरा से कर दिया। पिता की अभिलाषा थी कि गौतम बुद्ध सांसारिक वैवाहिक सूत्र में बंधकर वैराग्य की भावना को त्याग कर देगा, जिससे शासन और वंश वृद्धि जैसी दोनों इच्छाओं का समाधान सम्भव हो जायेगा, किन्तु समय कुछ और परिवर्तन चाहता था। पिता की इच्छानुसार घर में गौतम बुद्ध से संतान का जन्म तो हो गया, किन्तु पिता की दूसरी इच्छा पूर्ण न हो सकी। नवजात शिशु का 'राहुल' नाम रखा गया।

एक दिन पिता शुद्धोदन ने गौतम बुद्ध को वैराग्य सम्बन्धी समस्याओं से अवगत कराया। बहुमूल्य वस्तुओं को लालच दिया, यहां तक कि उनका विवाह भी कर दिया था। पिता की गम्भीर चेतावनी के उपरान्त भी गौतम बुद्ध की वैराग्य स्थिति में परिवर्तन न हो सका। वह पिता के चरणों में मस्तक झुकाते हुए कहने लगे "राजन मुझे खुशी सहित सन्यास लेने की आज्ञा दीजिए, क्योंकि एक दिन मुझे आपसे भी वियोग पाना है। अतः जब आपसे भी वियोग निश्चित है तो धर्माचरण के लिए आप से विमुक्त होना अत्यन्त श्रेष्ठ होगा।" उन्होंने पुनः आग्रह कर पिता से कहा कि – "यदि आप चार परम सत्यों से मेरा बचाव कर सकें तो, मैं वैराग्य का त्याग कर दूंगा।"

1. मेरा शरीर मृत्यु को प्राप्त न हो।
2. व्याधियां (रोग) मेरे शरीर को क्षीण न करें।
3. आयु के बढ़ते हुए मेरी युवावस्था विक्षिप्त न हो।
4. सांसारिक विपत्तियां मेरी सम्पत्ति का विनाश न करे।

उपरोक्त कटु सत्य के समक्ष पिता के पास जवाब न रहा, और उन्होंने पुत्र इच्छा को समर्थन दे दिया। एक दिन वैराग्य की अत्यधिक सोच ने गौतम बुद्ध को मानवांच्छित मंजिल की ओर मोड़ दिया और वह उन्नीस वर्ष की अवस्था में ही ग्रह त्याग कर परम शांति की खोज में बहुत दूर निकल गए। उन्होंने ज्ञानार्जन के लिए अनेक ब्राह्मणों तथा वैराग्य विवेकियों से चर्चायें की, किन्तु उन्हें पूर्ण संतुष्टी प्राप्त न हो सकी, और आगे चल दिये। गौतम बुद्ध ने बोध गया के वट वृक्ष के नीचे लगभग एक सप्ताह तक ध्यान मग्न रहने के उपरान्त "बोध सत्व" प्राप्त हुआ। गौतम बुद्ध जीवन सत्य जान गए। उन्होंने बताया कि

(क) संसार दुखमय है।
(ख) कष्ट, शोक, मोह और दुःख का कारण है।
(ग) यह कारण इच्छा अथवा वासना है।
(घ) इच्छा अथवा वासना का दमन करके दुःखों की समाप्ति सम्भव है।

गौतम बुद्ध के उपरोक्त उपदेशों को ही चार 'आर्य सत्य' कहा जाता है। प्राणी मात्र की हिंसा न करना, चोरी न करना, व्याभिचार न करना, असत्य न बोलना तथा नशीली वस्तुओं का सेवन न करना ही मानवता का सर्वोत्तम धर्म है। गौतम बुद्ध ने उपरोक्त आचरणों को ही 'पंचशील' कहा है। ज्ञानार्जन के उपरान्त गौतम बुद्ध सारनाथ गए, जहां उन्होंने भिक्षुओं को वासना रहित जीवन का उपदेश दिया। उन्होंने बताया कि अनर्थों से उत्पन्न दुःखों से अपने आपको दुःखी महसूस करना व्यर्थ है। गौतम बुद्ध के इन उपदेशों को ''धर्म प्रवर्तन प्रवचन'' कहा जाता है। गौतम बुद्ध ने जहां भारतीय इतिहास को सत्य परख ज्ञान से सुशोभित किया था, वहीं अपनी मातृभूमि पर खड़ा भारत, विश्व के सभी राष्ट्रों में स्वाभिमान का प्रतीक बना। उन्होंने अपने शिष्यों को उपदेश दिया कि जीवन पर्यन्त ऐसे धर्म की पुष्टि करो जो मानव मात्र के लिए कल्याणकारी हो। यही कारण था कि गौतम बुद्ध संसार के ऐसे महापुरूषों में जाने गए जिन्होंने जनमानस के समक्ष अमिट छाप प्रस्तुत की।

तत्कालीन वैदिक कर्मकाण्डों में फंसी हुई बहुसंख्यक जनता को गौतम बुद्ध के समानता, बन्धुत्व, न्याय एवं बौद्धिक स्वतंत्रता पर आधारित धर्म से अत्यधिक चेतना प्राप्त हुई, क्योंकि उनका धर्म सवर्ण मानसिकता–अस्पृश्यता, हिंसा, असमानता तथा रूढ़ियों के विरूद्ध था। बुद्ध का आदेश था कि प्रशस्त आचरणों का पालन करने से विद्या का विनाश सम्भव है। अविद्या के विनाश से ज्ञान स्फुटित होना सम्भव होगा, और ज्ञान से मानव जीवन सांसारिक बाधाओं से पृथक होकर मुक्ति फल प्राप्त करने में समर्थ होगा। उन्होंने बताया कि वैदिक अथवा योग परम्परा के अन्तर्गत यज्ञ, जप–तप और उग्र तप करना निरर्थक है। बुद्ध ने ईश्वर वाद को कभी मान्यता नहीं दी। उन्होंने स्पष्ट किया कि यदि ईश्वर जगत का उपादान कारण है तो यह जगत ईश्वर का रूपान्तर है, और जगत में जितनी भी व्याधियां–दुःख, बुराई, पाप, क्रूरता आदि भी ईश्वरकृत समझना चाहिए। इस प्रकार ईश्वर सुखमय के विपरीत दुखमय अधिक हुआ यदि ईश्वर को सृष्टि कर्ता माना जाय तो उसे प्रत्यक्ष होना चाहिए किन्तु ऐसा नहीं है। इसलिए ईश्वर की मान्यता मात्र कल्पना है। गौतम बुद्ध ने आत्मा को अनित्य तथा किसी भी धर्मग्रंथ को स्वतः प्रमाणिकता प्रदान नहीं की। इसके अतिरिक्त उन्होंने मानस जीवन को प्राप्त देह तक ही सार्थक माना। यही कारण था कि सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य ने 'बहुजन हिताय'। बहुजन सुखाय।" को अपने संविधान का सर्वोच्च सूत्र स्वीकार किया था। सम्राट मौर्य शासन काल में गौतम बुद्ध के वैज्ञानिकता पर खरे उतरे ज्ञान को प्राप्त करने के लिए देश–विदेशों के शिक्षार्थी तक्षशिला, विक्रमशिला, नालन्दा और पाटिली पुत्र के विश्व विद्यालयों में आते थे।

सम्राट चन्द्रगुप्त के उपरान्त सम्राट अशोक ने बुद्ध धर्म की शिक्षाओं को अनेक राष्ट्रो में प्रचारित किया। यही कारण है कि गौतम बुद्ध की शिक्षाओं से भारत के अलावा चीन, कोरिया, जापान, तिब्बत, नेपाल, लंका, वर्मा, थाईलैण्ड, वियतनाम तथा इण्डोनेसिया आदि राष्ट्रों ने भी विज्ञान, संगीत, शिल्प धातु आदि कला क्षेत्रों में आशातीत सफलता प्राप्त की। महामानव बुद्ध ने भारत में प्रचलित आर्यों की रूढ़ियों, स्वर्ग–नरक भाग्य–भगवान, जन्म–पुर्नजन्म तथा वर्ण व्यवस्था को मानव शोषण का साधन बताया। उन्होंने ब्राह्मणों एवं सम्बन्धित सवर्ण सामाज को बताया कि ढोंग, आडम्बर और भय की चेष्टा द्वारा मानवता को कष्ट पहुंचाना मानव धर्म नहीं, बल्कि दया, परोपकार, अहिंसा, प्रेम के द्वारा जन मानस की सेवा करना सच्ची मानवता है। गौतम बुद्ध ने मनु द्वारा प्रतिपादित वर्ण व्यवस्था को छल–प्रपंच, कपट, द्वेष, ईर्ष्या, पाखण्ड और अन्याय की जननी बताया। बुद्ध धर्म की शिक्षाओं से प्रभावित होकर जहां, सवर्णों ने पशु बलि का त्याग किया, वहीं हजारों वर्षों से दुःखी, भ्रमित, शोषित, अशिक्षित तथा अछूत सामाजिक को अपना उत्थान स्वयं करने की शिक्षा प्राप्त की। उन्होंने जाति एवं धर्म के नाम पर विभाजित जन मानस को अनेकता, विरोध, संघर्ष और आपसी बैर–भाव से हटाकर भाईचारे समन्वय, प्रेमालाप करने का अवसर प्रदान किया। मानव हितोपदेशेक बुद्ध ने जन कल्याण के लिए पैतालीस वर्ष तक मानस सत्य का प्रचार–प्रसार किया। उनके सत्य परख ज्ञान को प्राप्त कर अनेक प्राणी बुद्धिमान बनने का अवसर प्राप्त किए जिनमें डा. अम्बेडकर सर्वोपरि मानव थे।

भारतीय संविधान, भारतीय मुद्रा, राष्ट्र ध्वज में वर्तमान धम्म प्रवर्तन चक्र, पंचशील युक्त नीतियां, राष्ट्रपति के आवास स्थान का आकार तथा राष्ट्रपति सिंहासन के पीछे अंकित प्रतिमा आदि बुद्ध धर्म की कला, संस्कृति, आचरण, धर्मनिष्ठा की मिशाल तथा बुद्ध धर्म के आधार शिल्प है। उन्होंने अपने जीवन के अस्सी वर्ष तक सामाजिक विकृतियों से समझौता नहीं किया। गौतम बुद्ध ने अशिक्षित एवं शोषित अछूत जनता को उपदेश दिया शिक्षित बनो। स्वयं ऊपर उठो और अपने मार्ग का अन्वेषण स्वयं करो। गौतम बुद्ध ने मानस जीवन सार तत्वों को आठ "आष्टांगिक मार्गों" में क्रम बद्ध किया जिनका विवरण निम्न प्रकार है–

सम्यक दृष्टि : इस मार्ग के अन्तर्गत गौतम बुद्ध ने बताया कि जो वस्तु जैसी है उसे उसी भांति देखना चाहिए अर्थात् मानव दृष्टि में मोह, काम आदि कुविचार या दृष्टि विकार न हो।

सम्यक संकल्प : काम, क्रोध, लोभ और मोह आदि क्रूर कर्मों से मुक्त होने के लिए सदैव पवित्र चिन्तन करने का संकल्प लेना चाहिए ।

सम्यक वाचन : सम्यक वाचन के अनुसार विचारों की शुद्धता रखते हुए सदा सत्य बोलना चाहिए ।

सम्यक कर्मान्त : मानव प्राणी को ऐसे कर्म करने चाहिए जिससे अन्य प्राणियों को किसी प्रकार का कष्ट न हो।

सम्यक आजीविका : यह मार्ग हमें बताता है कि प्रत्येक मनुष्य स्वाजिविका पालन हेतु बुरे कर्म न करें। अपनी नेक कमाई से परिवारजनों के अतिरिक्त आगन्तुकों का भी सत्कार करना चाहिए ।

सम्यक व्यायाम : तन और मन से नियमित सद्गुणों को ग्रहण करें अर्थात् मनुष्य को सदा विवेकी बनने का व्यायाम कराना चाहिए ।

सम्यक स्मृति : के अन्तर्गत दैनिक सद्गुरु ध्यान, भजन एवं सत्संग द्वारा स्व स्मृति को आजीवन बनायें रखें।

सम्यक समाधि : सम्यक समाधि के लिए चंचल मन की गति को सांसारिक विषमताओं से हटाकर जीवन मुक्ति हेतु अपने इष्ट का ध्यान करना चाहिए ।

बाबा साहब डा. अम्बेडकर द्वारा लिखित ग्रन्थ ''बुद्ध या कार्लमार्क्स' में बुद्ध दर्शन के चतुर्थ भाग में पारमिताओं का सिद्धांत प्रतिष्ठित कर मानस जीवन के दैनिक सद्गुणों का बखान किया है जिनका विवरण निम्न प्रकार है –

1. ज्ञान : ज्ञान अथवा बुद्धि वह प्रकाश है जो अविद्या से उत्पन्न मोह तथा अज्ञान रूपी अंधकार को हटाती है। ज्ञान का अभिप्रायः है कि मानव विवेकपूर्ण प्राणियों से सत्य–असत्य का निर्णय कर भ्रम को दूर करें ।

2. शील : शील स्वाभाव होना मानव मात्र का नैतिक

आचरण है अर्थात् लज्जा, भय तथा दण्ड प्रक्रिया से बचने के लिए कुशल कर्म करना अपनी प्रवृत्ति का आधार बनाना चाहिए ।

3. त्याग : मानव मात्र के क्षणिक सांसारिक सुखों का त्याग कर सच्चे सुख की प्राप्ति के लिए सत्कर्म करना चाहिए ।

4. दान : तन, मन और यथा सम्भव धन से दूसरों की सहायता करना, किन्तु बदले में कोई इच्छा न रखना।

5. सम्यक प्रयत्न : अपनी पूर्ण शक्ति लगा कर उस कार्य को पूरा करना जिसका दायित्व सौंपा गया है।

6. शांति : मानव सहनशीलता ही शांति का परम आधार है।

7. सत्य : जो वस्तु जैसी है, जिस रूप में उपस्थित है, वह अपने आप में सत्य है।

8. दृढ़ संकल्प : अपने पूर्ण लक्ष्य तक पहुँचने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञावन बनें ।

9. मित्रता : सभी प्राणियों (मानव, शत्रु, पशु–पक्षी आदि) के प्रति मित्रता की भावना रखना। किसी भी प्राणी से वैर–भाव न रखना ही सच्ची मित्रता है।

10. विरक्ति : मानव मन की वह अवस्था जहाँ आसक्ति अथवा अनासक्ति का भाव अथवा विचार न हो ।

उपरोक्त कारणों से स्पष्ट होता है कि प्रज्ञा महामानव गौतम बुद्ध के अन्तःकरण में व्याप्त थी। उनका दर्शन तथा निर्णायक सत्याचरण हमें मानवता की रक्षा के हितार्थ सदा संदेश देते रहेंगे। महामानव गौतम बुद्ध आजीवन ज्ञान रश्मि द्वारा समाज सेवा करते हुए 81 वर्ष की आयु में ''काशीनगर मे निर्वाण पद प्राप्त किए ।

एन. एस. सुमन नई दिल्ली

साभार : बहुजन संगठक नई दिल्ली

15 से 21 मई 2000 वर्ष 20 अंक 14

सेवा में,

नाम ....

पता ....

....

....

अंगुलिमाल

अंगुलिमाल से सम्बन्धित अनेक कथायें प्रचलित हैं। गौतम बुद्ध के साथ ही अनेक शिष्यों ने अनेक प्रकार से अंगुलिमाल का चित्रण किया है। जन–सामान्य में भी किसी को शिक्षा देने के लिये किसी विद्वान अथवा तपस्वी का कथानक रचकर अंगुलिमाल से उसकी भेंट और अंगुलिमाल के हृदय परिवर्तन की अनेक कथायें प्रचलित हैं। यहां हम धम्मपद, मज्झिम निकाय, अंगुलिमाल सुत, विनय पिटक, थेर गाथा, अवदान शतक, मिलिन्द प्रश्न में वर्णित अंगुलिमाल से सम्बन्धित कथा का उल्लेख कर रहे हैं।

अंगुलिमाल कुलीन ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुआ था। वह कोसल राजपुरोहित का पुत्र था। उसके पिता का नाम गार्ग्य और माता का नाम मैत्रायणी था। अन्य कथाओं में उसे सामान्य गृहस्थ का पुत्र बताया गया है। यहां बुद्ध की महिमा प्रस्थापित करने के लिए उसे पुरोहित पुत्र बताया गया है। उसके जन्म के सम्बन्ध में भी अनेक कथानक प्रचलित है। हम यहां पर उसके विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं समझते। रात्रि में उसके जन्म के उपरान्त प्रातःकाल उसका पिता ज्योतिषियों के पास गया था और उन्होंने उसके विषय में अनेक भविष्य वाणियां की थीं। राजपुरोहित उसके उपरान्त राजा के पास गया तो राजा ने भी बताया कि रात उसके शस्त्रागार में उत्पात होता रहा इस कारण उसको नींद नहीं आई।

पुरोहित चिन्तित दिखाई दिया। राजा को विस्मय हुआ। उसने पूछा, ''क्या तुमने इसके विषय में ज्योतिषियों से पूछा है?''

''पूछा है महाराज!''

''तो?''

पुरोहित चुप रहा। राजा का विस्मय बढ़ गया। बड़ी कठिनाई से पुरोहित ने बताया कि उसका पुत्र चोर होगा। राजा ने पुरोहित को परामर्श दिया कि वह उसे मार डाले। पुरोहित ने कहा राजन वह अकेला ही चोर होगा तो उस पर नियन्त्रण रखा जा सकेगा। यों तो पुत्र को नहीं मारा जा सकता।''

राजा को भी दया आ गई। उसका अहिंसक भाव जागृत हो गया। इसलिये राजा के रहने पर उसका नाम 'अहिंसक' रखा गया। पुत्र में सात हाथियों को बल होने के साथ–साथ वह मेधावी भी था, आचार प्रिय था, प्रियवादी था। उसके यही गुण दूसरों की ईर्ष्या के कारण बने। आचार्य कुल में विद्याध्ययन के लिए जाने पर उसके साथी विद्यार्थियों ने निश्चय किया कि आचार्य को उससे विमुख करना चाहिये। उन्होंने तीन दल बनाये। पहले एक दल ने जाकर आचार्य के सम्मुख उसकी निन्दा की तो आचार्य ने उनको डांट कर भगा दिया।

कुछ काल उपरान्त दूसरा दल गया तो उसने भी आचार्य के सम्मुख उसकी निन्दा की, उसी प्रकार आचार्य को प्रभावित करने का कार्य किया। आचार्य ने उसको भी भगा दिया। तीसरा दल आया। उसने भी जब वही बात कही तो आचार्य आश्चर्य में पड़े। सबने एक बात एक समान कही थी कि वे स्वयं इसका परीक्षण करके देख लें। आचार्य असमंजस में पड़ गये। सोचने लगे कि यदि इसकी हत्या कर दी गई तो पाप लगेगा और विद्यालय की कुखयाति होगी फिर कोई पढ़ने के लिए नहीं आयेगा। अन्त में उनको एक उपाय सूझा कि अहिंसक को किसी प्रकार हिंसक बनाया जाय।

वही किया। अहिंसक जब विद्या पूर्ण कर के जाने की अनुमति के लिए आया और गुरुदक्षिणा देने की इच्छा व्यक्त की तो गुरु ने कहा, ''एक सहस्र व्यक्तियों को मारो।''

अहिंसक आश्चर्य में पड़ गया। उसने बहुत कहा कि उसका कुल अहिंसक है, वे विद्वान हैं आदि–आदि। किन्तु आचार्य ने कहा कि बिना दक्षिणा के विद्या एक तो फलती नहीं दूसरे उसने स्वयं वचन दिया था कि वे जो मांगेगे वह देगा।

अन्त में वह शस्त्र ले कर कोसल के वनों में प्रविष्ट हो गया। वह वन के प्रवेश, मध्य और निर्गम स्थान पर खड़ा होकर आगन्तुकों की हत्यायें करने लगा। उनके शरीर से वह कुछ लेना नहीं था, केवल गणना करता जाता था। गिनती जब बढ़ती गई तो उसने मृत व्यक्ति की एक अंगुली काट कर रखनी आरम्भ कर दी। बाद में वह उन अंगुलियों की माला बनाकर पहनने लगा। सारी अटवी उसके क्रूर कर्मों से त्राहि कर उठी। उस वन में अब कोई आता ही नहीं था। अब उसको अपनी संख्या पूरी करने के लिए ग्रामों में जाना पड़ा। रात्रि में ग्राम में जाता। एक लात से बन्द द्वार तोड़ता, लोगों की हत्या करना और अंगुलि काट कर ले आता।

ग्रामवासी त्रस्त हुए तो भाग–भाग कर निगमों में जाकर बसने लगे। अहिंसक निगमों में जाने लगा। निगमवासी डर कर नगरों में आकर रहने लगे। चारों ओर के जनों ने श्रावस्ती में आकर शरण ली। सारा जनसमुदाय राजा के प्रांगण में जाकर निवेदन करने एकत्रित हुआ। राजा ने सुना, प्रज्ञा को आश्वस्त किया, किन्तु किसी को विश्वास नहीं हो पाया।

तथागत अनाथपिण्डक के जेतवन में श्रावस्ती में ही निवास कर रहे थे। उनके कान में बात गई। वे अपना भिक्षा पात्र लिये वन को चले। मार्ग में सबने उनको रोकने की चेष्ठा की किन्तु सब निष्फल सिद्ध हुआ। तथागत बढ़ते गये।

अंगुलिमाल ने तथागत को आते देखा। उसे क्रोध आ गया। इस प्रकार निर्भय होकर आने वाला व्यक्ति उसका अपमान कर रहा है, यह उसको लगने लगा। उसने अपने अस्त्र–शस्त्र लिये और तथागत की ओर चलने लगा। किन्तु उनको पकड़ नहीं पाया। उसने कहा, ''श्रमण! ठहर जा।''

''मै तो खड़ा हूं।''

''चलते जा रहे हो और कहते हो खड़ा हूं। श्रमण होकर झूठ बोलते हो?''

यों उनमें विवाद होता रहा। अन्त में तथागत ने उसको समझाया कि ने स्वयं तो स्थित हैं और वह चलता जा रहा है। वह प्राणियों में असंयमी है उसने दण्ड का परित्याग नहीं किया है।

अंगुलिमाल पर तथागत की बातों का प्रभाव हुआ।

अंगुलिमाल तथागत के समीप आया, चरणवन्दना की। शस्त्रास्त्र फेंक दिये। तथागत ने कहा, ''आ! भिक्षु!''

पुराण ग्रन्थों ने यह कथा इस के सर्वथा विपरीत है।

अंगुलिमाल को लेकर तथागत श्रावस्ती में आये। उधर राजा के प्रांगण में प्रजा त्राहि–त्राहि कर रही थी। राजा ने उन्हें आश्वस्त किया और दो सौ अश्वारोहियों के साथ राजा ने वन की ओर प्रस्थान करने से पूर्व तथागत के विहार में जाना उचित समझा। वहां पहुंचा, तथागत की वन्दना की और एक ओर को बैठ गया।

राजा को चिन्तित अवस्था में देख कर तथागत ने कहा, ''राजन्! चिन्ता का विषय क्या है? क्या आप पर मगधराज बिम्बसार कुद्ध है अथवा वैशाली के लिच्छवि?''

'भन्ते! उनमें से तो कोई क्रुद्ध नहीं है। मेरी चिन्ता का विषय हिंसक अंगुलिमाल है। मैं अपनी इस अश्वारोहिणी सेना को लेकर उसके निवारणार्थ जा रहा हूं।''

''राजन्! यदि आप अंगुलिमाल को भ्रमण भिक्षु के रूप के देखेंगे तो क्या करेंगे?''

''हम उसका प्रत्युत्थान करेंगे। आसन ग्रहण करने के लिये आमन्त्रित करेंगे। किन्तु इतना दुःशील पापी कैसे शीलवान और संयमी हो सकता है?''

तथागत ने अंगुलमाल का बाहु पकड़ कर राजा को दिखाते हुए कहा, ''राजन्! यह है अंगुलिमाल।''

उसे देखते ही राजा भयभीत और स्तब्ध से हो गये। फिर कुछ देर बाद उठ कर उसके समीप गये और बोले, ''आप अंगुलिमाल हैं?''

''महाराज!''

''आपके पिता तथा माता का गोत्र क्या है?'' राजा मानो आश्वस्त होना चाहता हो।

''पिता का गार्ग्य और माता का गोत्र मैत्रायणी।''

''गार्ग्य मैत्रायणी! आप सुख से मेरे राज्य में अभिरमण करिये।''

प्रसेनजित ने तथागत के प्रति कृतज्ञा भरी दृष्टि से देखा और फिर आज्ञा लेकर चला गया।

इसके कुछ दिन बाद तथागत ने अंगुलिमाल को एक दुखी महिला के पास यह कहला कर भेजा कि वह उससे कहे कि उसने अर्थात् अंगुलिमाल ने कभी जानबूझकर किसी प्राणी का वध नहीं किया है, इससे उसका मंगल होगा। किन्तु जब अंगुलिमाल ने कहा कि यह तो असत्यभाषण है। मैंने तो जानबूझकर की हत्यायें की थीं। फिर–भी तथागत ने उसको भेजा और उस स्त्री का मंगल हुआ।

ऐसा विरोधाभास तथागत के जीवन में पग–पग पर प्राप्त होता है।

अंगुलिमाल श्रावस्ती में भिक्षाचरण के लिये निकला तो कुछ लोगों ने उसके दुष्कृत्यों को स्मरण कर उस पर पत्थर फेंके, भला बुरा कहा। अंगुलिमाल का सिर फट गया, पात्र टूट गया, किन्तु फिर भी उसने किसी को कोई कटु शब्द नहीं कहा। वह तथागत के पास गया। तथागत ने उसे आश्वस्त करते हुए कहा कि उसने इसी जनम में नरक भोग लिया है अब उसका विपाक होगा।

इस प्रकार अंगुलिमाल का उद्धार हुआ।

lkHkkj %
;x iord
it l[;k 114 l 117
xkre c)